तित्थयर ISSN-2277-7865

वर्ष – 47 अंक – प्रथम अप्रेल-2022

॥ जैन भवन ॥

JAIN BHAWAN
CALCUTTA

Editorial Board –

Dr.Narendra Parson

Dr.Sulekh Jain

Dr. Jitendra B. Shah

Prof.G .C.Tripathi

Shri Pradip Nahata (co-ordinator)

TITTHAYAR is accessible at our Website –
www.jainbhawan.in

For articles , reviews and correspondence kindly contact –

Dr.Lata Bothra

Chief Editor

Mobile no-9831077309,

E mail – latabothra13@yahoo.com ,
latabothra@gmail.com

संपादन

डा.किरन सिपानी

JAIN BHAWAN
CALCUTTA

We are thankful for the financial assistance given towards the online publication of our Journals from a well-wisher at California , U.S.A. .

अनुक्रमणिका

1) जगतसेठ डा. लता बोथरा
2) पुरुलिया की जैन धरोहर श्री अर्पित शाह

आवरण पृष्ठ – सरस्वती प्रतिमा , फतेहपुर सीकरी , उत्तरप्रदेश

जगत सेठ

डा. लता बोथरा

मुर्शिदाबाद बंगाल की राजधानी बनने के साथ-साथ एक और महान घटना तथा एक नया अध्याय बंगाल की राजनीति में जुड़ा, वह था जगतसेठ का प्रादुर्भाव। वैभवशाली, ऐश्वर्ययुक्त, धनकुबेर, सौभाग्यलक्ष्मी की कृपा-दृष्टि, जिनके ऊपर थी, दिल्ली के बादशाह, बंगाल के नवाब तथा अनेक राजा जमींदार सामंतों को अर्थ सहायता देने वाले, यहाँ तक कि अंग्रेजों का व्यापार भी जिनके अनुग्रह के बिना असमर्थ था। भारत और मुर्शिदाबाद के गौरव जगतसेठ का बंगाल में प्रादुर्भाव इतिहास की एक महत्त्वपूर्ण घटना थी। सारे राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक कार्य उनके परामर्श के बिना सम्पन्न नहीं होते थे। १८वीं सदी में उनके वंश के सदस्यों की परिगणना बंगाल के भाग्य-विधाताओं में की जाती थी। उनकी गद्दी भारत में अनेक जगहों पर थी। उनके कोषागार में अरबों-करोड़ों की संपत्ति थी जिसका मूल्यांकन नहीं किया जा सकता था। यहाँ तक कि मराठों द्वारा दो बार उनकी गद्दी लूटे जाने पर भी उनको कोई फर्क नही पड़ा। उस समय समग्र भारत में उनके समान कोई भी सेठ नहीं था, जिससे उनकी तुलना की जा सके। सम-सामायिक मुस्लिम इतिहासकारों ने लिखा है कि सेठ मानिकचंद के पास अपार संपत्ति थी।

The contemporary Muslim historians wrote that Seth Manik Chand had huge amount of gold and silver which could not be measured in any terms. He had a huge stock of emeralds. Proverbially it was said that he could stop the flow of river Ganga by constructing a wall of

gold and silver across its stream. It is believed that in those days , several times his wealth was looted but he continued to remain the richest person.

जगत-सेठ का आदि निवास जोधपुर जिले के अंतर्गत नागोर में था। इनके पूर्व पुरुष गिरधर सिंह मारवाड़ के खजवाड़ा गाँव में रहते थे। आय के साधन न होने से संपन्न होते हुए भी धीरे-धीरे आर्थिक संकट से गुजरने लगे। संवत् १५५२ में आचार्य जिनहंस सूरिजी के संपर्क में वे आए और जैनधर्म स्वीकार किया। उसके बाद उनके दिन बदलने लगे और फिर से संपन्न हो गए। उनके पुत्र गेलाजी हुए, जिनके नाम पर परिवार का गोत्र **गेलडा** हो गया। कालांतर में ये लोग नागोर में आकर बस गए और हीरानंदजी के समय आर्थिक हालात पुन: डावाँडोल हो जाने के कारण उन्होंने व्यापार के लिए परदेश जाने की योजना बनाई। यति जी से मुहूर्त निकलवाया। यति जी ने पूर्व दिशा की ओर जाने का निर्देश दिया। हीरानंदजी निकल पड़े परन्तु कुछ दूर जाने पर उन्हें रास्ते में एक फन वाला साँप दिखाई दिया। जिसको उन्होंने अपशगुन समझा और वापस लौट आए। यति जी के पास गए और बताया। यतिजी ने कहा कि यह बहुत अच्छा शगुन था उस समय चले जाते तो छत्रपति बनते। अब भी जाओगे तो जगतपति जरूर बनोगे। हीरानंदजी पूर्व दिशा की ओर चल पड़े और बीहड़ रास्ते को पार करके पंद्रह दिन में आगरा पहुँच गए। उस समय आगरा में शाहजहाँ का राज्य था और आगरा विश्व की अति संपन्न और वैभवपूर्ण नगरी मानी जाती थी। वहाँ पर उन्हें एक मोदीखाने की दुकान पर तीन रुपए महीने की नौकरी मिली। वे गणित में होशियार, मेहनती और ईमानदार थे। उनके दुकान के ग्राहकों में सरकारी अधिकारी भी थे जो हीरानंद के व्यवहार से खुश थे। उनमें मीरजुमला नाम के अधिकारी से जो औरंगजेब का हाकिम था उसकी हीरानंद से काफी घनिष्ठता हो गयी। जब मीरजुमला का तबादला पटना में हुआ तो वह अपने साथ हीरानंद को भी पटना ले गया और वहीं उसे एक दुकान करवा दी।

जैसे-जैसे मीरजुमला की तरक्की होती गई, हीरानंद की दुकान भी बढ़ने लगी । पटना उस समय व्यापार की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण था। यहीं से शोरा, शक्कर, लाह, कस्तुरी, अफीम और रंगीन छींटे दूसरे मुल्कों को जाती थी तथा दूसरे मुल्कों से बहुत-सी चीजें आयात होती थीं। कलकत्ता उस समय बस रहा था। औरंगजेब के पोते अजीमुशान ने केवल चौदह हजार में सूतापट्टी गोविंदपुर और कलकत्ता अंग्रेजों को बेच दिया था। चिरसुरा, हुगली राजमहल ढाका और पटना की गिनती बड़े-बड़े शहरों में होती थी। ईस्ट इंडिया कंपनी ने भी अपनी शाखा पटना में खोली उस समय यह कंपनी साधारण स्थिति में थी और हीरानंद कंपनी को ऊँचे ब्याज पर रुपया उधार देते थे । इस प्रकार सन् १६८५ ई० तक तेतीस वर्षों में हीरानंद अपनी मेहनत और ईमानदारी से लखपती बन गए। चारों ओर उनकी साख बढ़ गई तथा बिहार के अलावा बंगाल के राजमहल और ढाका में भी उनके व्यापार का विस्तार हो गया था। मीरजुमला के बाद शाहिस्ताखान और औरंगजेब का बेटा मोहम्मद आजम नाजिम हुए परंतु हीरानंद सबके विश्वासपात्र थे। अंग्रेजों का भी कोई काम रुक जाता या नाजिम से सिफारिश करानी होती तो वे हीरानंद के पास जाते थे। अगले छब्बीस वर्षों में वे लखपती से करोड़पति बन गए। साठ वर्ष पहले बीस वर्ष की आयु में वे नागोर से पैदल चलते मजदूरी करते हुए आगरा पहुँचे थे। उनके जीवन में ही पचास वर्ष राज्य करके औरंगजेब की मृत्यु हुई और उसका पुत्र मुअज्जम बहादुरशाह प्रथम के नाम से दिल्ली के तख्त पर बैठा। बंगाल, बिहार के बहुत से गरीब हिन्दुओं का जजियाकर सेठ हीरानंद की कोठी से दिया जाता था। मारवाड़ से बहुत से युवकों को लाकर उन्होंने यहाँ पर बसाया और उन्हें सहायता दी। सन् १६६८ ई. में उड़ीसा के अफगानों में मेदनीपुर के जमीदार शोभासिंह से मिलकर एक बड़ी बगावत कर दी। औरंगजेब पंद्रह वर्षों से दक्षिण में उलझा हुआ था ऐसे संकट के समय सेठ हीरानंद ने बिहार के नाजिम बादशाह के पोते अजीमुशान की मदद की। यद्यपि हीरानंद को जगतसेठ की पदवी नहीं मिली फिर भी लोग उन्हें जगतसेठ मानते थे। उन्होंने

बिहार बंगाल और राजस्थान में अनेक धर्म स्थानों का निर्माण कराया था। सन् १७११ ई. में सतासी वर्ष की आयु में उनकी मृत्यु हुई। उनके सात पुत्र एवं एक पुत्री थी। उनके व्यापार के विभित्र शाखाओं का काम उनके सातों लड़के सँभालते थे। अत: हम कह सकते हैं कि जगतसेठ के वंश की उन्नति की पृष्ठभूमि पटना में निर्मित हुई। पटना में हीरानंद ने जैनधर्म के मंदिर एवं श्री जिनदत्त सूरिजी की दादाबाड़ी बनवाई थी। उस समय पटना सिटी चौक के उत्तर में एक गली पाई जाती थी जिसे हीरानंद हास की गली कहते थे। उनका बनाया हुआ मकान कालवशात गंगा के गर्भ में चला गया। घाट भी उनका ही बनवाया हुआ था। दस्तावेजों से मालूम पड़ता है कि हीरानंद शहजादे के कृपापात्र एवं खास जौहरी थे। दिल्ली में हीरानंद की गली प्रसिद्ध है। पूर्णचंद्रजी नाहर के संग्रह से प्राप्त माणक्यदेवी रास नामक ऐतिहासिक कृति में जगतसेठ के वंश के विषय में लिखा हुआ है–

नगर सुवश पटंणैबसै, ओशवंश सिरदार।
गोत गहिलडा जगप्रगद, दौलतवंत दातार॥ १॥
हीनन्द नरीन्द्रसम, मानं सहु कोई आंण।
सत पुत्र तेहने प्रगट, अदभुत गुण माणि खांण॥ २॥
मांणकचंद्र नरेन्द्रसम, चौदह विद्या भंडार।
लछन अंग बत्तीस तसु, काम तणो अवतार॥ ३॥
वर देषित हरषित भए, कीनो तिलक तिवार।
करी सझाई व्याहनी रची बरात विस्तार॥ ४॥

सेठ हीरानंद के पाँचवें पुत्र माणकचंद हुए। मुशीदकुली खाँ के संग उनका बहुत हार्दिक सोहार्द था। मुर्शिदकुली खाँ के संग ही वे ढाका आए, जो उस समय बंगाल की राजधानी थी। बंगाल के नाजिम अजीमुशान के साथ मुर्शीदकुली खाँ का मतभेद उत्पन्न होने से मुर्शीदकुली खाँ ढाका से मकसूसाबाद आये तो मानिकचंद्रजी भी उनके साथ आए। मानिकचंद की सलाह से ही मुर्शीदकुली खाँ ने मुर्शिदाबाद शहर बसाया और मानिकचंद के परामर्श से ही सब राज-काज चलाने लगे। वहीं महिमापुर में मानिकचंद ने अपनी विशाल और शानदार

हवेली बनवाई। मुर्शीदकुली खाँ के किए प्रशासनिक और आर्थिक सुधारों के परामर्शदाता मानिकचंदजी थे। इन आर्थिक सुधारों के कारण ये दोनों बंगाल और बिहार की जनता के दिलों में बस गए थे। नवाब से उन्होंने टकसाल बनाने की इजाज़त ले ली थी। उनकी टकसाल में ढले सिक्के पूरे राज्य में चलते थे।

When Seth Manik Chand established his Kothi at Dacca, the then capital of Bengal, there was a political shake up in the country. The Mughal Emperor Aurangzeb was losing his influence and the chiefs at distant places were increasing their personal influence and power to establish independent states. Aurangzeb had appointed Murshidkuli Khan as Diwan of Azimusshan, the Nawab of Dacca. Intelligent, courageous and bold, both Murshidkuli Khan and Seth Manik Chand, who had brotherly affection for each other, wielded great influence and power in Dacca. Seth Manik Chand had helped him much in becoming the Nawab of Bengal. The town of Murshidabad along river Ganga was set up with joint efforts of both. Seth Manik Chand invested heavily to make it a prosperous town. They sent an annual revenue of rupees two crores to Aurangzeb in place of the existing revenue of rupees one crore and thirty **lakhs.** Pleased with this, Aurangzeb shifted the capital from Dacca to Murshidabad. Azimsusshan remained only a titular chief The people of Bengal, Bihar and Orissa regarded Murshidkuli Khan and Seth Manik Chand as uncrowned princes of their heart. Seth Manik Chand always

generously helped the poor, redeemed the miseries of the oppressed and the peasants and made their condition better both financially and socially, Bengal became much peaceful and prosperous as a result of his wise fiscal policies and development of trade and commerce by him.

Jagat Seths of Murshidabad, Prograssive Jains of India.

जहाँदार शाह के वध के बाद दिल्ली का बादशाह फखरुशियर बना। वह एक राजपूत कन्या से विवाह करना चाहता था इस कारण कोई भी हकीम और वैद्य उसके रोग का निदान नहीं कर पा रहे थे। उसी समय एक अंग्रेज व्यापारियों का दल दिल्ली आया जिसमें हेमल्टन नाम के डाक्टर ने बादशाह को रोगमुक्त कर दिया। बादशाह ने उन्हें मुँहमाँगा इनाम देने का वचन दिया जिसके बदले अंग्रेजों ने बंगाल के कुछ परगने माँग लिए। इसी घटना से बंगाल में अंग्रेजी राज्य की नींव पड़ी। बादशाह का फरमान जब मुर्शीदकुली खाँ को मिला तो उसने बिना तामिल किए वापस भेज दिया। बादशाह ने क्रोध में आकर मुर्शिदकुली खाँ को बर्खास्त कर सेठ मानिक चंद्र को बंगाल का दीवान बना दिया लेकिन सेठ ने उसे स्वीकार नहीं किया और उनके अनुरोध पर बादशाह ने मुर्शीदकुली खाँ को पुन: दीवान नियुक्त किया। अनेक मुस्लिम इतिहासकारों, लेखकों ने बंगाल में नवाबों की पराजय का कारण जगतसेठ को बतलाते हुए उनकी आलोचना की है लेकिन यह गलत है जबकि जगतसेठ यदि चाहते तो स्वयं बंगाल के हाकिम बन सकते थे परन्तु उन्होंने ऐसा कभी नहीं किया।

On receiveing the Farman for his appointment as Diwan, Seth Manik Chand met Murshidkuli Khan and removed the misunderstanding from his mind. With his consultation he wrote to the emperor

that though he accepts the post but he would again hand it over to the deserving Murshidkuli Khan. lt shows the great character of Seth Manik Chand. He tackled the order about releasing the land to the English very intelligently and managed that instead of transfer of land to them the English may do business in the area without paying custom-tax.

The entire revenue of Bengal, Bihar and Orissa was collected by Jagat Seth and the currency minted by him was used in these three States.

Progressive Jains of lndia

सेठ माणकचंद ने भागीरथी नदी के किनारे तीर्थंकर पार्श्वनाथ का कसौटी पत्थरों के भव्य मंदिर का निर्माण किया। इन मूल्यवान कसौटी पत्थरों को नवाब मुर्शिदकुली खाँ से खरीदा था जिन्हें मुर्शिदकुली खाँ गौड़ के प्राचीन मौर्यकालीन महलों में बने मंदिर से लूटकर लाया था। बाद में भागीरथी के कटाव से मंदिर को बचाने के लिए कसौटी के पत्थर तथा मूर्ति को अन्यत्र दूसरी जगह स्थापित कर दिया। संवत् ११५८ ई. में लार्ड कर्जन जब जगतसेठ के महल एवं मंदिर के भग्नावशेष देखने मुर्शिदाबाद पधारे तो इन पत्थरों के सौन्दर्य से इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने इन पत्थरों को कलकत्ता के विक्टोरिया मेमोरियल में महारानी की प्रस्तरमूर्ति के आसनरूप में लगाने की इच्छा जाहिर की थी। परन्तु जगतसेठ खानदान ने इसे उचित नहीं समझा। संवत् ११७६ ई. में पुन: नए जैन मंदिर का निर्माण सेठ गुलाबचंद के पुत्र सेठ फतहचंद (2) ने आरंभ किया, तब इन बहुमूल्य पत्थरों से मन्दिर को फिर अलंकृत किया गया। सेठ मानिकचंद अपार धन संपत्ति के मालिक थे। बंगाल, बिहार और उड़ीसा में उन्हीं की टकसाल में बने रुपए चलते थे। कर्नल जेम्सटॉड के अनुसार उनके पास इतना

सोना-चाँदी था कि गंगा के ऊपर सोने की ईंटों का पुल बन सकता था।

जगतसेठ मानिकचन्द की धर्मपत्नी माणिक देवी थीं। वे जिनधर्म में अटूट श्रद्धा रखने वाली परोपकारिणी तथा महातपस्विनी थीं।

इलाहाबाद जिले में, गंगा के किनारे साहजादपुर नामक एक शहर है, प्राचीनकाल में यह नगर बहुत ही समृद्धशाली था । इस नगर का नाम कविवर पं० बनारसीदास जैन के अर्द्धकथानक में भी तीन-चार जगह आता है तथा तपागच्छीय सौभाग्यविजय कृत तीर्थमाला में भी उल्लेख मिलता है। इस महानगरी में ओसवाल वीराणी गोत्रीय पूरणमल नामक एक धर्मनिष्ठ एवं साधन-संपन्न श्रीमंत रहते थे । इनकी पत्नी का नाम गुलाबदेवी था, जिसने वि. सं. १७३० श्रावण वदी ११ को एक बालिका को जन्म दिया, यह बालिका अति रूपवान एवं कोमलांगी थी, अत: इनका नाम किशोरकुमारी रखा गया। होनहार विरवान के होत चीकने पात की उक्ति के अनुसार बचपन से ही कुछ विलक्षण लक्षण माता-पिता ने उसमें देखे, द्वितीया के चंद्र की तरह पूरणाकार होकर किशोरी ने कौमार्यावस्था से युवावस्था में पदार्पण किया।

किशोरी के षोड़शी होने पर पूरणमल को उसके विवाह की चिंता हुई। सुयोग्य वर की खोज में देश देशान्तरों में दूत भेजे गए। अंत में पटने के प्रमुख व्यापारी हीरानंद शाह के सुपुत्र मानिकचंद से किशोरकुमारी का वाग्दान निश्चित हुआ, जो आगे जाकर सेठ पद से विभूषित एव जगत् सेठ के पिता हुए। ज्योतिषियों ने विवाह का शुभ मुहूर्त निकाला। हीरानंदशाह बारात लेकर साहजादपुर गए। बारातियों को मिष्ठान भोजन तथा आतिथ्य से अपूर्व आवभगत की गई। पूरणमल ने दहेज में बहुत-सा धन देकर किशोर कुमारी को मानिकचंद के साथ विदा किया।

घर की लक्ष्मी बहु मानी जाती है। हीरानंद शाह के घर में किशोरकुमारी का बहु-रानी के रूप में पदार्पण करते ही धन वैभव, यश और राजसत्ता में उत्तरोत्तर वृद्धि होती देखी गई। विवाह के बाद उनका नाम माणिक देवी रखा गया।

माणिक देवी के गृह प्रवेश से हीरानंद शाह के घर की तो वृद्धि हुई ही, साथ ही उस नगर की भी बहुत वृद्धि हुई यह माणिकदेवी के पुण्यशाली जीव होने का सूचक था।

माणिक देवी बहुत दातार थीं। उन्होंने गरीबों के लिए सदाव्रत खोल रखे थे। वे प्रतिदिन अपने हाथों से भूखों को भोजन और नंगों को वस्त्र देकर ही स्वयं भोजन करती थीं। उनका दिल दुःखी-दरिद्रों के प्रति बहुत दयावान था।

स्वधर्मी-बंधु की सेवा शास्त्रोक्त समझकर जगतसेठ परिवार भी उन दिनों तन-मन-धन से सबकी मदद करता था। फलतः मुर्शिदाबाद में जहाँ पहले दो-चार घर ही जैनियों के थे वहाँ माता माणिक देवी की प्रेरणा व मदद से हजारों जैन गृहस्थ वहाँ आकर बस गए। इन्होंने लाखों रुपए स्वधर्मी बंधुओं की सेवा में व्यय किए। सम्राट फरूखशियर ने माणिक देवी के उच्च आदर्शमय जीवन की कहानी सुनकर इन्हें बहुमूल्य आभूषण प्रदानकर सेठानी के पद से विभूषित किया और पाँव में सोना पहनने का अधिकार दिया।

वह सेठ माणिकचन्द की मृत्यु के पश्चात् २७ वर्ष तक जीवित रहीं। धर्म, भक्ति, साधना और सेवा के अतिरिक्त माणिक देवी की साहित्य में भी रुचि थी। इनकी प्रेरणा से एक कवि ने भूपाल चतुर्विंशतिका नामक ग्रंथ का निर्माण किया था। इस ग्रंथ की सचित्र प्रति में तथा अन्य एक ग्रंथ में अपने परिवार की वंशावली संबंधी ज्ञातव्य बातों को माणिकदेवी ने लिखवाया जो वि.सं. १७७७ मिती फाल्गुन वदी २ को पूरा हुआ था। अपने वैधव्य के २७ साल उन्होंने घोर तपस्या में व्यतीत किए। अपनी शेष आयु में एक वर्ष तक निरंतर सोने की मुहरें दान कीं। माता माणिक देवी की दान मुग्धता पर प्रसन्न होकर कवि ने लिखा है।

कर्ण भोज विक्रम भए, सतयुग में दातार।
कलियुग में माणिकँदे जिसी, देखी नहीं संसार॥ ८८॥

सम्मेत शिखर का संघ निकालकर तीर्थयात्रा की और उसके बाद उन्होंने अपनी कोठी में जिनमंदिर का निर्माण कराया।

अंत में अनशन धारण करके उन्होंने अपनी देह का त्याग किया। इस आदर्श श्राविका के विषय में पार्श्वचंद गच्छवाचक हर्षचंद के अनुज निहालचंद नामक जैन मुनि ने सेठानी श्री माणिकदेवी रास की रचना १२५ पदों में की है। वे स्वयं सेठानीजी के धर्मगुरु थे और उनके उच्च आचार विचार और व्यक्तित्व से बहुत प्रभावित थे। इस रास की रचना माणिक देवी के स्वर्गवास के बारह दिनों में की गई है। उन्होंने उनके बारे में लिखा है–

सतजुग में सोल सती हुई, साधवी साधु अनेकों रे।
कलियुग में मोटी सती, माणिकदे सुविवेकों रे॥ १॥
शास्त्रमांहि सुणता हता रे लाल, साधु-साध्विनी बात रे।
परतक्ष देखी आँख सुं रे लाल, माणिक देवी मात रे॥ २॥

स्वर्गीय भँवरलालजी नाहटा ने माता मणिकदेवी के विषय में लिखा है–

"माता मणिकदेवी के जीवन-प्रभा का अध्ययन करने से हमें ज्ञात होता है कि वे अत्यंत धार्मिक वृत्तिवाली सद्गृहस्थ थी। जैनधर्म व जिन पूजा पर उन्हें अटूट श्रद्धा तथा भक्ति थी। दातार होने के अतिरिक्त वे एक महा तपस्विनी भी थीं। माणिकदेवी ने श्राविका के सब व्रतों को अपने जीवन में व्यावहारिक रूप देकर अन्य श्राविकाओं के वास्ते एक आदर्श उपस्थित किया है। इसी कारण वे आदर्श श्राविका हैं। लक्ष्मी पुत्री होने पर भी गर्व तो उन्हें छू तक नहीं गया था। उन्होंने सदा दीनों की सेवासुश्रुषा की। स्वधर्मी बन्धुओं के साथ कैसा व्यवहार करना चाहिए; इसकी शिक्षा हमें मणिकदेवी के जीवन से मिलती है। इन सब बातों पर विचार करते हुए हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि सती-साध्वी माणिकदेवी का अनुकरणीय जीवन एक अखंड चिराग की जलती हुई ज्योति है, जिसका प्रकाश अंधेरे में भटकने वाली हमारी माताओं तथा बहिनों को सदा पथ प्रदर्शन करता रहेगा।

बंगाल गेजेटियर में माणिकचंद के विषय में लिखा है–

The importance of Manikchand may be realised from the fact that when in 1712, during the

fight for succession, Azimusshan declared himself emperor, Manikchand received a siropa and an elephant, and his nephew an elephant from the State, for their support. In the same year, when Farrukh Siyar en-throned himself at Patna and proceeded to compete for the Delhi throne, he took loan from Manikchand to finance his endeavours. Soon after his accession, Farrukh Siyar honoured Manikchand with the title of Nagar Seth (the city banker). Manik chand died in 1714, but before his death the banking house was firmly established in Murshidabad. He was succeeded by his nephew Fatehchand. Fatehchand was adopted by him as a child and he had trained him up as a banker and clever diplomat.

फरुखशियर ने अपने शासन के तीसरे वर्ष में फरमान जारी करके मानिकचंद को नगर सेठ का खिताब दिया। ये खिताब प्राप्त करके सारे भारत वर्ष में वह सेठ के नाम से प्रसिद्ध हो गए और नवाब के बाद उनका ही नाम लिया जाने लगा। उस समय पाँव में सोना पहनने का अधिकार सिर्फ नवाब की बेगम को था। लेकिन बादशाह ने स्वयं सेठ मानिकचंद की पत्नी मानिकदेवी को सम्मान के प्रतीक के रूप में पाँव में सोने का गहना भेंट दिया।

सेठ मानिकचंद की दो पत्नियाँ थीं जिनका नाम मानिकदेवी और सुहागदेवी था। लेकिन उनके कोई संतान नहीं होने के कारण उन्होंने अपनी बहिन धनबाई जिनका विवाह अतारा निवासी राय उदयचंदजी गोखरू से हुआ था उनके तीसरे पुत्र फतेहचंद को गोद लिया था। सेठ मानिकचंद की मृत्यु १७१४ ई० में हुई। टक्साल के पास भागीरथी के किनारे दयाबाग में उनका अग्नि संस्कार किया गया। किसी-किसी किताब में मानिकबाग नाम लिखा है। आज ये किस जगह पर है

इसकी जानकारी नहीं है। उसके बाद फतेहचंद उनके उत्तराधिकारी बने। उन्होंने न केवल अपने पूर्वजों की विरासत का संरक्षण किया वरन् उसको और भी समृद्ध किया। उनके काल में जगतसेठ परिवार उत्थान के शिखर पर पहुँच गया था। वे बहुत ही कुशल तथा नीतिज्ञ थे। १७२३ ई० में मुर्शीदकुली खाँ की सिफारिश पर मुगल सम्राट फरुखशियर ने उन्हें जगतसेठ का खिताब दिया। अंग्रेजों के एक दस्तावेज के अनुसार मुर्शीदकुली खाँ ने जगतसेठ का खिताब दिलाने का अनुमोदन करने का पाँच लाख रुपया लिया था।

''In 1723, Fatehchand got the title of Jagat Seth from the emperor on the recommendation of Murshid Quli. An English Company record says that Murshid Quli had. 'Fleeced' five lakhs of rupees from Fatehchand in 1722, as a price for the confer-ment of the title. Jagat Seth became the most influential private person in Murshidabad''

फरुखशियर के बाद मोहम्मद शाह दिल्ली का बादशाह बना। उस समय मुगल सल्तनत की आर्थिक अवस्था बहुत ही डाँवाडोल थी और राजनैतिक अस्थिरता बनी हुई थी। सेठ फतेहचंद के मशवरे से बादशाह ने कुछ आर्थिक सुधार किए जिससे आर्थिक अवस्था में काफी सुधार आया। इससे प्रसन्न होकर मोहम्मद शाह द्वारा भी उन्हें जगतसेठ की पदवी से सम्मानित किया गया और उनके पुत्र आनंदचंद को सेठ की पद्वी दी गई।

मुर्शीदकुली खाँ के बाद उसका दामाद शुजाउद्दीन बंगाल और उड़ीसा का नवाब बना। उसने अनेक इमारतें बनवाई तथा वह अपनी शान-शौकत और विलासिता पर खुलकर खर्च करता था जिसके कारण वह धन के लिए जगतसेठ, हाजी अहमद और आलमचंद पर पूर्णतया निर्भर था। इसलिए उसने जगतसेठ से अच्छे संबंध बनाए रखे। उसके समय में जगतसेठ और ईस्ट इंडिया कंपनी के बीच रुपए के लेनदेन के

कारण गहरे मतभेद उत्पन्न हुए थे। कंपनी जगतसेठ का रुपया हड़पना चाहती थी। लेकिन जगतसेठ फतेहचंद ने अपनी कुशलता और सूझ-बूझ के साथ कंपनी से अपना रुपया अदायी कर लिया। जगतसेठ फतेहचंद का रुतबा इतना ज्यादा था कि उनकी सहायता के बिना या उनका विरोध करके कोई भी टिक नहीं सकता था। कंपनी के विरोध करने पर कंपनी का व्यापार बंद हो गया और वह समझौता करने पर मजबूर हो गए, इस प्रकार जगतसेठ का रुपया कंपनी को चुकाना पड़ा। अंग्रेज समझ गए थे कि हमें यदि यहाँ व्यापार करना है तो जगतसेठ की सहायता लेनी ही पड़ेगी। सन् १७३१ में शुजाउद्दीन की मृत्यु के बाद उसका बेटा सरफराज बंगाल का हाकिम बना। जो एक अत्यंत विलासी, कामुक और कमजोर व्यक्ति था।

लगभग इसी समय ईरान के नादिरशाह ने भारत पर आक्रमण किया और दिल्ली में लूटमार की। बंगाल की समृद्धि को देख उसकी नजरे बंगाल पर थीं। उससे टक्कर लेने में सरफराज खान असमर्थ था। अत: इस संकट की घड़ी में बंगाल के छोटे बड़े सब जमींदार, राजा और नवाब आदि जगतसेठ के पास आए। जगतसेठ की महिमापुर की कोठी मंत्रणा गृह बन गई थी। अंत में जगतसेठ की सूझ-बूझ से उसकी टक्साल में ढले एक लाख सोने के सिक्के नादिरशाह को भेंट किए गए जिससे वह प्रसन्न होकर लौट गया और बंगाल नादिरशाह के आतंक से बच गया।

महिमापुर की एक अत्यंत सुंदर कन्या से जगतसेठ के लड़के के पुत्र की शादी होने वाली थी जिस पर सरफराज खाँ मुग्ध हो गया और उसे अपने महल में भेजने के लिए जगतसेठ से कहा। जगतसेठ के आपत्ति जताने पर भी नवाब ने जबरन उस कन्या को अपने महल में बुलाया।

He (Fateh chand) had about this time married his youngest grandson named Seet Mohtab Roy to a young creature of exquisite beauty, aged

about eleven years. The fame of her beauty coming to the ears of the Sarpharajkhan he turned with curiosity and lust for the possession of her and sending for Jaggat Seth demanded a sight for her.

Holwells Interesting Historical Events pt I Chapt II, p.70.

मुस्लिम इतिहासकारों ने इस घटना पर पर्दा डालते हुए लिखा है कि मुर्शीदकुली खाँ की मृत्यु के समय जगतसेठ के पास एक करोड़ रुपया उसका जमा था। (कहीं-कहीं सात करोड़ का वर्णन है) सरफराज खाँ जगतसेठ को उस रुपए के लिए बराबर प्रताड़ित करता रहता था। इसीलिए नवाब को बदनाम करने के लिए यह षड्यंत्र जगतसेठ ने किया जबकि ऐसा कहा जाता है कि उस समय जगतसेठ का प्रत्येक दिन का कारोबार एक करोड़ का था अत: जगतसेठ जैसे व्यक्ति के लिए एक करोड़ या सात करोड़ रुपए का कोई महत्त्व नहीं था। फतेहचंद बहुत ही दूरदर्शी, बुद्धिमान और धार्मिक व्यक्ति थे जो किसी का रुपया रखना तो दूर की बात जरूरत पड़ने पर हर किसी की सहायता के लिए तत्पर रहते थे। मुस्लिम इतिहासकार जो भी कहें लेकिन उस समय की यह घटना एक भीषण अपराध थी जो नवाब सरफराज ने की थी । सरफराज की विलासिता के कारण कोष पूरी तरह खाली हो गया था तथा इस घटना से दिल्ली के बादशाह भी सरफराज से अप्रसन्न थे। उनकी सहमति से अलीवर्दी खाँ जो बिहार का हाकिम था उसने सरफराज पर आक्रमण कर दिया। गिरिया के युद्ध में सरफराज पराजित होकर मारा गया और अलीवर्दी खाँ बंगाल का नवाब बन गया। अलीवर्दी खाँ बहुत ही शांतिप्रिय और कुशल व्यक्ति था। उसके समय में सन् १७४१- ४२ ई० में मराठों ने बंगाल पर हमला कर दिया। अलीवर्दी खाँ को कई बार मराठों से युद्ध करना पड़ा। मराठों से युद्ध करने के लिए धन की सहायता जगतसेठ द्वारा की जाती थी। जगतसेठ के साथ अपने अच्छे संबंधों के कारण वह उनका बहुत सम्मान करता था। इसीलिए मराठों के आक्रमण के समय

अलीवर्दी खाँ ने जगतसेठ को सुरक्षित स्थान में भेजकर अपने सेनापति मीरहबीब को मुर्शिदाबाद और जगतसेठ की कोठी की सुरक्षा के लिए भेजा। लेकिन मीरहबीब ने ईर्ष्यावश जगतसेठ की कोठी को मराठों द्वारा लूटने दिया। करीब दो करोड़ रूपए की संपत्ति मराठों ने लूटी और कोठी तहस-नहस हो गई। एक वर्ष बाद पुन: मराठों ने हमला किया इस बार समझौते के बहाने अलीवदी खाँ ने भास्कर पंडित को बुलाया और अपनी तलवार से उसकी गर्दन काट दी।

जगतसेठ के पास इतनी संपत्ति थी कि मराठों द्वारा दो करोड़ लूटे जाने पर भी उनकी समृद्धि में कोई असर नहीं पड़ा। उनके कारोबार में लेन-देन हुंडियों द्वारा होता था। ये हुंडियाँ पचास लाख से एक करोड़ तक की दी जाती थीं जो दर्शनी हुंडी कहलाती थीं। बंगाल के सारे दिवानी और वित्तीय मामले जगतसेठ के अधिकार में थे। ईस्ट इंडिया कंपनी ने जगतसेठ से लाखों रुपए कर्ज ले रखा था जिसका भुगतान वे चाँदी बेचकर करते थे। एक तरह से वह अपने व्यापार के लिए जगतसेठ पर निर्भर रहते थे।

In 1732 when the English East India Company sent Rs. 1,50,000 to Patna, they borrowed the amount from the House of Jagat Seth. At Kasim Bazar, the servants or the Company borrowed Rs. 2,00,000 from the House. The Company was irritated but had to admit that if they were to trade in Bengal. Futteh Chand must be satisfied and the house must be kept in temper.

जगतसेठ फतेहचंद का महत्त्व मुर्शिदाबाद ही नहीं दिल्ली के राजनैतिक हलकों में भी जबरदस्त था। यूरोपियन व्यापरिक कंपनियाँ भी जब कोई काम दिल्ली सल्तनत या मुर्शिदाबाद के नवाब से कराना चाहती थी तो वह जगतसेठ के मार्फत ही कराती थी।

Fateh Chand’s nearness to the political supremos in Delhi and Murshidabad gradually led to his involvement in the politics of the

period. The European companies courted him for his word carried great weight with the Nawab and the Mughal Emperor. Whenever they needed some favour from the Nawab or the Emperor, they routed their request through the House of Jagat Seth.

जगत सेठ के इतने प्रभावशाली होने के कारणों का आकलन करते हुए एक लेखक ने लिखा है–

An author has graphically described the reasons for the tremendous influence wielded by the House of Jagat Seth. ''The major sources of the huge income, tremendous power and great prestige of the house of Jagat Seth were derived from their farms of Murshidabad and Dacca mints, two-thirds of the province's revenue collection, their control over rates of exchange, interest rates, bill-braking and the provision of credit'.

The economic importance of the House received impetus when it was called upon to remit the annual tribute of the Subah to Delhi.

The existence of branches of the House in all the important trade centres in eastern, northern and western India, enabled the House to carry on the work of transmission of money through hundis. This was a very important segment of their activities. A contemporary author noted that a *darshani hundi* between rupees fifty lakhs and one crore could be drawn in the time of Seth Fateh Chand . The prosperity of the House was so well established

that even when the Marathas in 1742 looted Rupees two crores from the House of Jagat Seth, its liquidity was not impaired. In 1747 the Chief of the Dacca Factory of the English East India Company received Rs. one lakh by means of a *hundi* sent from Kasimbazar and discounted by the House of Jagat Seth.

फतेहचंद के बड़े पुत्र का नाम आनंदचंद था जिनका स्वर्गवास पिता से पहले ही हो जाने के कारण फतेहचंद के बाद उनका पौत्र महताबचंद गद्दी पर बैठा। उस समय दिल्ली का बादशाह अहमदशाह था। उसने महताबचंद को जगतसेठ और उनके भाई स्वरूपचंद को महाराजा का खिताब दिया। जैन तीर्थ सम्मेदशिखर का स्वामित्व भी इन दोनों भाइयों को दिया गया।

"पारसनाथ सिंह ने अपनी पुस्तक '**जगतसेठ**' में लिखा है कि अठारहवीं शताब्दी में जिस उथल-पुथल ने अंग्रेज जाति को बंगाल का अधीश्वर बना दिया था, उसके इतिहास से मुर्शिदाबाद के जगतसेठ का नाम विशेष रूप से संबद्ध है। मुर्शिदाबाद से दिल्ली तक जगतसेठ परिवार की ऐसी धाक जमने का कारण था उसका सारे तख्त का एक जबरदस्त पाया होना। प्रथम जगतसेठ फतेहचंद ने जो मान महत्त्व पाया था वह साधन संपन्नता के साथ अपनी राजसेवाओं के बल पर। इन सेवाओं में एक यह था कि मुगल साम्राज्य पर विपत्ति वर्षा होने के समय वह यहाँ से ही दिल्ली के लाल किले में करोड़- सवाकरोड़ का भुगतान हुंडी के जरिए ही करा सकते थे। जगतसेठ सरकार का एक अभिन्न अंग बन गया था और संयुक्त होकर दोनों एक-दूसरे के हानि-लाभ में अपना हानि-लाभ समझने लगे थे।"

''Their riches were so great, that no such bankers were ever seen in Hindustan or Deccan; nor was there any banker or merchant that could stand a comparison with them, all over India It is even certain that all the bankers of their time in Bengal, were either their factors, or

some of their family. Their wealth may be guessed by this only fact. In the first invasion of the Marhattas, and when Moorshoodabad was not yet surrounded by walls, Mir-habib, with a party of their best hourse, having found means to fall upon that city, before Aly-verdy khan could come up, carried from Jagat Sett's house two crores of rupees in Arcot coin only; and this religious sum did not affect the two brothers, more than if it had been two trusses of straw. They continued to give afterwards to Government, as they had done before, bill of exchange, called darshani hundies, of one crore at a time, by which words is meant, a draft, which the acceptor is to pay at sight, without any sort of excuse. In short, their wealth was such that there is no mentioning it without seeming to exaggerate, and to deal in extravagant fables. Thousands of their agents and factors have acquired such fortunes in their service, as have enabled them to purchase large tracts of land, and other astonishing possessions''.

Seir Mutaqherin, Trans. VoI, II, pp. 226-227.

सन् १७५६ ई० में अस्सी वर्ष की उम्र में अलीवर्दी खाँ की मृत्यु हुई उसके बाद उनकी पुत्री अमीना बेगम का पुत्र सिराजुद्दौला बंगाल, बिहार और उड़ीसा का नवाब बना। सिराजुद्दौला और अलीवर्दी खाँ के संबंध के विषय में १७७८ में Mahmud ने लिखा है—''Mirza Mahmud Siraj, a youth of seventeen years, had discovered the most vicious propensities, at an

age when only follies were expected from princes. But the great affection which Allaverdy [Ali Vardi] had borne to the father was transferred to this son, whom he had for some years bred in his own palace; where instead of correcting the evil dispositions of his nature, he sufered them to increase by overweening indulgence: born without compassion, it was one of the amusements of Mirza Mahmud's childhood to torture birds and animals, and taught by his minions to regard himself as of a superior order of being, his natural cruelty, hardened by habit, rendered him as insensible to the sufferings of his own species as of the brute creation [animals]: in conception he was not slow, but absurd; obstinate, sullen, and impatient of contradiction; but notwithstanding this insolent contempt of mankind, innate cowardice, the confusion of his ideas rendered him suspicious of all those who approached him, excepting his favourites, who were buffoons and profligate men, raised from menial servants to be his companions: with these he lived in every kind of intemperance and debauch-ery, and more especially in drinking spiritous liquors to an ex-cess, which inflamed his passions and impaired the little understanding with which he was born. He had, however, cunning enough to carry himself with much demureness in the presence of Allaverdy, whom no one ventured to inform of his real character; for in despotic states the sovereign is always the last to hear what it concerns him most to know''

कनिष्क द्वारा लिखी गई **'जगतसेठ'** किताब में स्पष्ट लिखा है कि अलीवर्दी खाँ के समय नवाबी सेना ने वेतन नहीं मिलने पर जब लड़ने से इनकार कर दिया था, तब जगतसेठ ने धन द्वारा नवाब की सहायता की, जो धन जगतसेठ ने नवाब को सेना के लिए देते थे उससे वह स्वयं अपनी एक बड़ी फौज सुरक्षा के लिए रख सकते थे, लेकिन नवाब के प्रति अपनी वफादारी निभाते हुए उन्होंने ऐसा कभी नहीं किया। अलीवर्दी खाँ भी जगतसेठ का बहुत सम्मान करता था और उनकी सुरक्षा का दायित्व भी उसने बखूबी निभाया।

अलीवर्दी खाँ ने अपनी मृत्यु के पूर्व सिराज को अपना उत्तराधिकारी घोषित करते हुए उसे जगतसेठ की सलाह अनुसार चलने का परामर्श दिया था। लेकिन सिराजुद्दौला अत्यंत अस्थिर बुद्धि और चंचल स्वभाव का था। किसके साथ कैसा व्यवहार करना चाहिए और कैसा नहीं इसका उसे ज्ञान नहीं था। उसके आचरण से सभी दरबारी असंतुष्ट थे।

''Making no distinction between wise and virtue, he carried defilement wherever he went, and, like a man alienated in his mind, he made the house of men and women of distinction the scenes of his depravity, without minding either rank or station. In a little time he became detested as Pharaoh, and people on meeting him by chance used to say, 'God save us from him!'''

अलीवर्दी खाँ की बड़ी लड़की घसीटी बेगम सिराज को नवाब नहीं बनाना चाहती थी। वो निःसंतान विधवा थी। उनके पास अपार संपत्ति थी जिससे उन्होंने अपने लिए गौड़ के प्राचीन अवशेषों से मिले काले संगमरमर के खंभों का महल बनवाया था। इस महल के चारों तरफ मोती झील बनवाई थी। गद्दी पर बैठते ही सिराज के सामने दो प्रमुख समस्याएँ थीं। प्रथम अंग्रेजों की बढ़ती महत्त्वाकांक्षा को रोकना और

द्वितीय अपने विरोधी रिश्तेदारों से बदला लेना। गद्दी पर बैठने के बाद उसने सेना भेजकर घसीटी बेगम की संपत्ति कब्जे में कर ली और उनसे अशोभनीय व्यवहार किया। उसने सेनाध्यक्ष मीरजाफर की शक्तियों में भी कटौती कर दी।

The young nawab faced a two prolonged problem: the increasing ambitions of the British and the conspiracy of his disgruntled realatives who were allied with the bureaucrates. He tried to encounter these by first relieving his maternal aunt, wealth and slashing the powers of Mir-Jafar, the Commander-in-Chief (Bakshi) of the royel army.

मुताखरीन के अनुसार नवाब सिराज सेठ महताबचंद के साथ बहुत ही अशोभनीय व्यवहार करता था और उनकी सलाह को महत्त्वहीन समझकर अवहेलना करता था। बात-बात में महताबचंद को जबरन

मुसलमान बनाने का भय भी दिखाता था ।

जगतसेठ महताबराय

उसके चरित्र के बारे में मुस्लिम इतिहासकार गुलाम हुसैन सलीम ने लिखा है–

''Owing to Sirajud Dowla's harshness of temper and in-dulgence, fear and terror had settled on the hearts of everyone to such an extent that no one among his generals of the army or the noblemen of the city was free from anxiety. Amongst his officers, whoever went to wait on Siraj ud Dowla despaired of life and honour, and whoever returned without being

disgraced and ill-treated offered thanks to God. Siraj ud Dowla treated all the noblemen and generals of Mahabat Jang [Ali Vardi Khan) with ridicule and drollery, and bestowed on each some contemptuous nickname that ill-suited mlany of them. And whatever harsh expressions and abusive epithet came to his lips, Siraj ud Dowla uttered them unhesitatingly in the face of everyone, and no one had the boldness to breath freely in his presence.''

बंगाल में जो भी नया नवाब बनता दिल्ली बादशाह द्वारा उसकी स्वीकृत सनद के रूप में दी जाती थी और यह सनद जगतसेठ के द्वारा भेजी जाती थी। राजनैतिक अस्थिरता के कारण सनद आने में देरी होने से पूर्निया के नवाब सौकत जंग और सय्यद अहमद ने दिल्ली के बादशाह के प्रधानमंत्री को अपने पक्ष में करके बंगाल का नवाब बनने के लिए विद्रोह कर दिया। सिराज ने मोहनलाल और मीरजाफर को उनका विद्रोह दमन करने के लिए भेजा। इस युद्ध के लिए व्यापारी वर्ग से तीन करोड़ रुपए संग्रह करने का आदेश जगतसेठ को दिया। इन लोगों पर जबर्दस्ती उत्पीड़न कर वसूली करना असंगत समझकर जगतसेठ ने इस आदेश का प्रतिवाद किया। फलस्वरूप नवाब ने जगतसेठ के मुख पर घूँसे का प्रहार किया और बंदी बनाने का आदेश दिया। इस प्रकार दिल्ली का बादशाह जिस जगतसेठ का वंशानुक्रम से सम्मान करता आ रहा था उनका भी अपमान सिराजुद्दौला ने किया। बाद में मीरजाफर द्वारा जगतसेठ को छुड़ाया गया। (यद्यपि भारतीय इतिहासकारों ने इस घटना का उल्लेख नहीं किया है लेकिन निखिलनाथ राय की मुर्शिदाबाद की कहानी में इसका वर्णन मिलता है।)

ऐतिहासिक वर्णनों के अनुसार सिराजुद्दौला स्वेच्छाचारी और अत्यंत विलासी था। उसने कई खून करवाए। महिमापुर के ही सद्गृहस्थ

मोहनलाल की बहन को जो सारे बंगाल में सर्वाधिक सुंदर मानी जाती थी अपने **अंत:पुर** में दाखिल कर लिया। रानी भवानी की विधवा पुत्री तारा को अंकशायिनी बनाने के लिए षड्यंत्र रचा तो वह अग्नि में जलकर भस्म हो गई। कुछ इतिहासकारों का कहना है कि सिराजुद्दौला ने जगतसेठ के खानदान की अस्मत पर भी डाका डाला था। 'प्लासी युद्ध' नामक ग्रंथ में सिराज की इस बदचलनी को चित्रित किया गया है। प्रजा में असंतोष बढ़ने लगा। इधर अंग्रेजों के साथ भी शत्रुता बढ़ने लगी। जगतसेठ अंग्रेजों से शत्रुता मोल लेने के पक्ष में नहीं थे। वे जानते थे कि नवाब की सेना व्यवस्थित नहीं है तथा अधिकारी वर्ग भी सिराज से नाराज है किन्तु सिराजुद्दौला ने एक न सुनी। अंग्रेज तब तक कलकत्ता में पाँव जमा चुके थे तथा फोर्ट विलियम में किलेबंदी कर चुके थे।

अलीवर्दी खाँ के समय जो सभासद नवाब के वफादार थे वे सब सिराज के विरुद्ध हो गए। २४ मई १७, मई, ३६ में सिराज ने अंग्रेजों की काशिमबाजार की फैक्ट्री में कब्जा कर लिया। जून में कलकत्ता पर अधिकार कर लिया। जो अंग्रेजों का गढ़ था। इसके बाद वे पूर्णियाँ में शौकत जंग के विद्रोह को दबाने में लग गया। इससे फायदा उठाकर अंग्रेजों ने पुन: कलकत्ता को जीत लिया और मीरजाफर से गुप्त संधि कर ली। अंत में राबर्ट क्लाइब के नेतृत्व में अंग्रेजी सेना ने २३ जून, १७५७ ई० में सिराजुद्दौला को प्लासी के युद्ध में हरा दिया। सिराजुद्दौला मारा गया और मीरजाफर गद्दी पर बैठा। इन सारे घटनाक्रम में बार-बार सिराजुद्दौला द्वारा अपमानित होने के बावजूद भी जगतसेठ ने प्रत्यक्षरूप में नवाब का विरोध नहीं किया और न ही अंग्रेजों का साथ दिया। यहाँ तक कि सिराजुद्दौला और अंग्रेजों के बीच वह संधि का सेतु भी बने रहे क्योंकि वह जानते थे दोनों में से किसी का भी साथ देना एक तरफ खाई और दूसरी तरफ कुँए के समान था।

On the 24th May 1756 AD **Siraj** occupied the **Cossimbazar** factory of the British . He went on to occupy Calcutta in June 1756 AD. Next he went to **Purnea,** Bihar to quell the rebellion of his cousin **Shaukat Jang,** also a contestant for the throne. Taking advantage of this turbulent situation, the British re-conquered Calcutta in February 1757 AD and struck a secret deal with **Mir-Jafar**. When the British captured the French factory at **Chanden nagar,** the French sought help from Siraj. The final showdown between Siraj-u-Daula and the Brit- ish army, commanded by **Robert Clive,** took place at the fields of Plassey, a tiny village, located midway between Calcutta and Murshidabad. Owing to an act of gross betrayal by Mir Jafar, Siraj was defeated on 23rd June 1757 AD, and subsequently killed. Mir-Jafar ascended the throne of Bengal.

अंग्रेज मीरजाफर को नवाब बनाना चाहते थे। लेकिन जगतसेठ इसके लिए राजी नहीं थे। फिर भी उन्होंने इसका विरोध नहीं किया क्योंकि मीरजाफर ने उन्हें सिराजुद्दौला की कैद से छुड़ाया था। कुछ इतिहासकार जगतसेठ को भारत में अंग्रेजी राज्य की स्थापना के लिए दोषी मानते हैं जबकि वास्तविकता यह थी कि दिल्ली की मुगलसल्तनत पूरी तरह कमजोर हो गई थी। अब तक मुगल सल्तनत के अधिकार में सबसे समृद्धशाली सूबा बंगाल का था, जिसका कारण जगतसेठ के अधिकार क्षेत्र में यहाँ के सारे आर्थिक और वित्तीय प्रशासन थे। लेकिन सन् १७६५ ई० में शाहआलम ने बंगाल, बिहार और उड़ीसा की दीवानी अंग्रेजों को सौंप दी उसके बाद से बंगाल का पतन होने लगा। भारत में अंग्रेजी राज्य की स्थापना का प्रमुख कारण

मुगल सल्तनत का कमजोर होना और सिराजुद्दौला की अदूरदर्शितापूर्ण नीतियाँ जिसके कारण बंगाल का पतन हुआ और अंग्रेजी साम्राज्य की नींव दृढ़ होने लगी।

सिराजुद्दौला के बाद मीरजाफर नवाब बना जो अंग्रेजों के हाथों की कठपुतली था। अंग्रेज कर वसूली करने लगे जिससे कोष खाली हो गया। यद्यपि यह कहा जाता है कि मीरजाफर ने अंग्रेजों को कलकत्ता में टकसाल खोलने की भी इजाजत दे दी। जिसके कारण कंपनी के पाँव और भी मजबूत हो गए लेकिन कंपनी ने प्रथम ही ये इजाजत सिराजुद्दौला से संधि कर ले ली थी। अंग्रेजों के साथ पहले युद्ध में सिराज ने वापस लौटते समय कंपनी से एक संधि की थी जिसके तहत कलकत्ता में टकसाल खोलने की मंजूरी दी और दूसरे कलकत्ता के पास के ८० ग्राम जिनको मुर्शीदकुलीखाँ ने अंग्रेजों को लेने नहीं दिया था उनको भी खरीदने का अधिकार सिराज ने अंग्रेजों को दे दिया। संधि की तीसरी शर्त के अनुसार अंग्रेजों के शत्रु उसके शत्रु हो, और अंग्रेजों के मित्र नवाब के मित्र होगें। यह संधि जगतसेठ के लिए बहुत ही हानिप्रद सिद्ध हुई।

जब फ्रांसीसियों ने अंग्रेजों से पराजित होकर भागकर नवाब के पास गए तब नवाब ने उन्हें पनाह देकर संधि की शर्तों को तोड़ दिया। लॉर्ड क्लाइब के बार-बार सचेत करने पर भी नवाब सिराजुद्दौला ने नहीं सुना जिसका परिणाम नवाब की पराजय और उसकी मौत में हुआ। उसके बाद मीरजाफर नवाब बना लेकिन वह जब अयोग्य सिद्ध हुआ तब उसके स्थान पर मीरकासिम को बंगाल का नवाब बनाया गया। उसने अंग्रेजों के विरुद्ध युद्ध छेड़ दिया। जगतसेठ के प्रभाव से डरकर और अंग्रेजों से जगतसेठ के अच्छे संबंध होने के कारण उसने जगतसेठ महताब राय और उनके भाई स्वरूपचंद को कैद कर लिया। अंग्रेजों से युद्ध हार जाने के बाद भागते हुए मीरकासिम ने जगतसेठ को गंगा में डुबो देने का आदेश दिया। इस तरह जगतसेठ महताब राय और उनके भाई स्वरूपचंद का दुःखद अंत हुआ। जगतसेठ

की हत्या के बाद उनके स्वामी भक्त नौकर चुन्नी ने भी नदी में कूदकर आत्म हत्या कर ली।

जगतसेठ महताब राय की मृत्यु के बाद उनके पुत्र खुशालचंद उत्तराधिकारी बने। दिल्ली के बादशाह शाहआलम ने उन्हें भी जगतसेठ की उपाधि से सम्मानित किया। मीरकासिम के भाग जाने के बाद पुन: मीरजाफर बंगाल का नवाब बना और अंग्रेजों ने उससे लाखों रुपए हरजाने के तौर पर लिए। उसकी मृत्यु के बाद उसका पुत्र नजीबुद्दौला नवाब बना। उसके समय कंपनी और नवाब के बीच समझौता हुआ जिसमें अंग्रेजों को सेना रखने और धन वसूलने का अधिकार प्राप्त हो गया। अंग्रेजों ने दिल्ली के बादशाह को छत्तीस लाख रुपए सालाना देने के एवज में राज्य की दीवानी का अधिकार प्राप्त कर लिया। जगतसेठ का लाखों रुपया जो कंपनी ने कर्ज के रूप में लिया था वो भी नहीं दिया। राज्य के व्यापार पर कंपनी ने अपना एकाधिकार बना लिया। सारा मुनाफा इंग्लैण्ड जाने लगा। अंग्रेजों द्वारा ऋण न चुकाने के कारण जगतसेठ और अंग्रेजों के बीच मतभेद बढ़ने लगे परिणाम स्वरूप मुर्शिदाबाद की पुरानी टकसाल बंद कर दी गई। अत: मुद्रा पर भी अंग्रेजों का एकाधिपत्य हो गया। इन सबके बावजूद जगतसेठ खुशालचंद अपने खानदान की दान प्रवृत्ति की परंपरा का निर्वाहन मुक्त हाथ से करते रहे। उस समय जगतसेठ के परिवार का मासिक खर्च एक लाख रुपया था। उनके परिवार में प्राय: चार हजार व्यक्ति थे। जिनमें बारह-सौ स्त्रियाँ थीं। सेठ खुशालचंद बहुत ही शांत और धार्मिक प्रकृति के थे। उन्होंने १०८ सरोवरों का निर्माण कराया तथा अनेक जैन मंदिर बनवाए। जगतसेठ खुशालचंद की चालीस वर्ष की अल्पायु में मृत्यु होने पर परिवार की स्थिति बिगड़ती गई क्योंकि ऐसा माना जाता है कि उनकी अचानक मृत्यु हो जाने से जो गुप्त संपत्ति जमीन के अंदर थी उसके बारे में वह किसी को बता नहीं सके। सेठ खुशालचंद के पुत्र गोकुलचंद की मृत्यु पिता की मृत्यु से चार वर्ष पूर्व ही हो गई थी। अत: उन्होंने अपने भतीजे हरखचंद को गोद ले लिया और वे ही उनके उत्तराधिकारी हुए। अंग्रेजों की सिफारिश पर नवाब मुबारकउद्दौला

ने सेठ हरखचंद को जगतसेठ की पदवी दी। वे पुत्र न होने से बड़े व्यग्र रहते थे। एक वैष्णव फकीर के प्रभाव में जगतसेठ ने वैष्णव धर्म का एक मंदिर बनवाया। लेकिन परिवार के अन्य लोग तथा महिलाएँ जैनधर्म के प्रति आस्थाशील बने रहे। जगतसेठ ने वारेनहेस्टिंग के जाने से पहले टकसाल को खुलवाने का आवेदन पत्र अंग्रेजों को दिया लेकिन अनुमति नहीं मिली। पुन: मुर्शिदाबाद में टकसाल खोलने की अनुमति माँगी गई लेकिन कंपनी ने मंजूर नहीं किया क्योंकि इससे कंपनी का वर्चस्व खत्म हो सकता था।

मुखातरीन के अंग्रेजी अनुवादक ने पूर्वापर की तुलना करते हुए लिखा था कि फतेहचंद के समय में जगतसेठ के लिए, दो करोड़ लुट जाने पर भी 1 सरकार को पचास लाख से एक करोड़ तक की दर्शनी हुंडी देते जाना साधारण बात थी। आज कल के जगतसेठ १७८७ में १४०,००० की हुंडी का भी भुगतान कर सके हैं तो कई किस्तों में ही। अपने धन का अधिकांश या तो खुशालचंद स्वयं लुटा चुके थे या उनके मरने पर वह जहाँ-तहाँ डूब चुका था। उनके परिवार में किंवदंती यह चली आई है कि जो निधि गड़ी हुई थी उसका उनके सहसा मर जाने के कारण किसी को पता न बता सके थे। अपने चाचा गुलाबचंद से विरासत में कुछ धन पाकर ही हरखचंद अपने नाम की थोड़ी लाज रख सके थे।

जगत सेठ–पारसनाथ सिंह

जगतसेठ हरखचंद के दो पुत्र हुए। इन्द्रचंद और विष्णुचंद। हरखचंद के बाद इन्द्रचंद जगतसेठ बने। २७ वर्ष की अवस्था में इनकी मृत्यु हो जाने पर इनके पुत्र गोविंदचंद ने पिता की विरासत को सँभाला। लेकिन कंपनी ने गोविंदचंद को जगतसेठ स्वीकार नहीं किया। कुछ लेखकों का मानना है कि कंपनी ने उन्हें जगतसेठ की मान्यता दी थी। गोविंदचंद अपने घर के पुराने जेवर बेचकर अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करने लगे। सन् १८४३ ई० में कंपनी ने उन्हें १२०० रुपए की मासिक वृत्ति देना स्वीकार किया। गोविंदचंद के कोई पुत्र न होने

के कारण उन्होंने गोपालचंद को गोद लिया। गोपालचंद और विशनचंद के पुत्र किशनचंद दोनों ने मासिक वृत्ति के लिए कंपनी से आवेदन किया। गोविंदचंद की मृत्यु के बाद गोपालचंद के समय कंपनी की तरफ से यह मासिक वृत्ति ७०० रुपए कर गई तथा किशनचंद को ५०० रुपए देना निश्चित किया गया। किशनचंद द्वारा पुन: कंपनी को आवेदन दिया गया तब कंपनी ने किशनचंद को ८०० और गोपालचंद को ३०० रुपए देने की बात कही। जिसे गोपालचंद ने अस्वीकार कर दिया। किशनचंद की मृत्यु के बाद गोपालचंद की पत्नी सेठानी प्राणकुमारी बीबी को कंपनी की तरफ से ३०० रुपए की मासिक वृत्ति दी जाने लगी। सेठानी प्राणकुमारी बीबी द्वारा गोलापचंद को गोद लिया गया। इन्हीं गोलापचंद के बड़े पुत्र फतेहचंद तथा छोटे पुत्र उदयचंद के समय में कसौटी पत्थर का मन्दिर जो भागीरथी के कटाव के कारण गंगा में विलीन हो गया था उसको भग्नावेशों सहित महिमापुर के नवनिर्मित घर में पुन: प्रतिष्ठित किया गया। १८१६ ई० के भयानक भूकंप में सेठ मानिकचंद द्वारा बनाया महिमापुर का प्रसाद ध्वस्त हो गया। अत: उससे कुछ दूर पर ही नवनिर्मित घर बनाया गया जिसमें फतेहचंद और उदयचंद रहते थे। लगभग इसी समय में गवर्नर जनरल लार्ड कर्जन मुर्शिदाबाद गया था। वहाँ उसने महिमापुर के खंडहर देखे और वहाँ पर सेठ परिवार को मुगल बादशाहों से मिले हुए फरमानों और जेवरों के अलावा पंद्रहवीं शताब्दी के बाद के कुछ दुष्प्राप्य सिक्के देखने का भी अवसर मिला। जिस फरमान के द्वारा फर्रुखसियर ने फतेहचंद को 'जगतसेठ' की उपाधि दी थी उसे गुलाबचंद ने कलकत्ता की 'विक्टोरिया मेमोरियल' नामक संस्था को समर्पित कर दिया। जगतसेठ फतेहचंद की मृत्यु 1958 ई० में हुई थी। उनके पुत्र सौभागचंद थे जिनकी डकैतों द्वारा हत्या कर दी गई थी। उनके दो पुत्र सेठ ज्ञानचंद और सेठ विजयचंद हुए । वर्तमान में सिर्फ विजयचंद हैं ।

महिमापुर का कसौटी मंदिर–

इतिहास प्रसिद्ध जगतसेठ परिवार द्वारा निर्मित मुर्शिदाबाद-महिमापुर कसौटी पत्थर के जिनालय एक तीर्थ स्थान बन गया था। सेठ हीरानंद शाह जो नागोर से आगरा पटना आदि स्थानों पर व्यापार के लिए आए उनके तथा उनके वंशजो का दबदबा मुगल दरबार, मुर्शिदाबाद के नवाबों में एवं अंग्रेजों पर बना रहा। इनकी शान और शौकत किसी राजा बादशाह से कम नहीं थी। समूचे देश में उनकी अनेक कोठियाँ थीं। धार्मिक क्षेत्र में भी उनके विशद् क्रिया-कलाप थे। सम्मेद शिखर तीर्थ के विकास में भी उनका बड़ा योगदान रहा। साधारण प्रजा से लेकर राजा महाराज तथा दिल्ली के बादशाह भी उनका सम्मान करते थे। धीरे-धीरे कालांतर में जब इस परिवार का पतन होने लगा और अंग्रेजों द्वारा उन्हें धोखा दिया गया तथा भागीरथी के कटाव के कारण करोड़ों की संपत्ति का नुकसान हुआ, दुर्लभ कसौटी निर्मित गंगा कुए तट पर बना जिनालय भग्न हो गया। तब सेठ उदयचंद ने भगवान की प्रतिमाओं को अपने महिमापुर की कोठी में लाकर नूतन जिनालय का निर्माण कर पुराने भग्नावेशों को यथास्थान पर लगाया ।

जगतसेठ निर्मित कसौटी पत्थर का मन्दिर

स्व० जगत-सेठ गुलाबचंदजी रोजदा, महिमागंज
(मुर्शिदाबाद)

जगत-सेठ फतेचंदजी रोजदा, महिमागंज
(मुर्शिदाबाद)

जगतसेठ का घर

जिस तरह बंगाल से जैनी लोगों को जब पलायन करना पड़ा था तो वे अपने साथ प्राचीन मूर्तियाँ आदि ले गए और राजस्थान में जगह-जगह प्रस्थापित कर दीं। इसी प्रकार जब जगतसेठ परिवार मंदिर की देखभाल में भी अक्षम हो गया तो वर्तमान में परम श्रद्धेय आचार्यप्रवर श्री पद्मसागर सूरीश्वर महाराज साहब की प्रेरणा से अहमदाबाद के श्रेष्ठीवर्य श्री मुकेश भाई शाह ने इस मंदिर को गांधीनगर के बौरिज में ले जाकर आचार्यप्रवर श्री पद्मसागर सूरीश्वरजी महाराज की निश्रा में पुनः प्रतिष्ठित किया। आज महिमापुर का जगतसेठ के कसौटी के पत्थर का यह जिनालय गुजरात के गांधीनगर के विश्वमैत्री धाम, बौरिज में अपने अतीत के इतिहास को संजोए हुए सभी को आमंत्रित कर रहा है।

कसौटी मंदिर की प्रशस्ति–

दानेयेंन तिरस्कृतः सुरतरु धैयेंण वारानिधि
लब्ध वंश विभूषक च जगतः श्रेष्ठीतिरभ्यं पदम्
हीरानंद इति प्रभूत विभवः श्रेष्ठी ते भूषितो
लोकानां सुखदे जिनेर्निगदित धमेरतः सोम्मवत्॥ १॥
माणिक्यचंद्र श्रेष्ठी तस्य सुतो गुणि गणैः सुपूज्योऽभूत।
तस्य च रुचिरः सूनुः श्रीमान् फतेचन्द्रः जगतः श्रेष्ठी पद॥ २॥
तस्मात् कला कलापै रानन्धानन्दचन्द्र नामढ्यः
तस्मादपिच सुपुत्रो जातो महतावरायश्च॥ ३॥
तस्मात् खुशालचन्द्रो भूद् हर्षचन्द्रस्तएंगजः
तदात्मजश्चेन्द्रचन्द्रो धर्म कर्म परांयणः॥ ४॥
गोविन्दचन्द्रः प्रवभूव तस्मा जातोऽंग भूजस्य गुलाबचन्द्रः
युद्धप्रियः प्रीतिकरो जनाना जगतः श्रेष्ठीति शब्दः प्रतिवंश मासीत्॥ ५॥
प्रभुदित पतिकर लालित देहा कुलजनसुखकर वाचि प्रवीणा।

पर भूत रवजिति फूलकुमारी बुध गण रति कृति तस्य प्रियाभूत॥ ६॥
तस्या फतेचन्द्र सुत: कनिष्ठ सास्यानुज जगत: श्रेष्ठीवरो हि जात:।
स्निग्ध: सुकीर्त्योदयचन्द्र संज्ञ स्ताध्यांच सा शीलवती गुणगा॥ ७॥
निकष प्रस्तर निर्मित मन्दिर सुरनदीस्य भग्न मवेक्ष्य तत्।
शुभकरी प्रतिमां गहमानयद् नवनिकेतन वास विधित्सया॥ ८॥
शभद् माधव मासि सिते दले सु शर सप्त नवेन्दु (११७५) मितेऽब्दके।
विधु युतोत्तरफाल्गुनि कर्कटे यम तिथौ जिन पार्श्व प्रतिष्ठितम्॥ १॥
भुवन संसृति दुःख विमोचिनी निज विधापित नूतन मन्दिरे।
व्यतनुत प्रथिते महिमापुरे रुचिकरे च मुनीन्द्र सुसंकुले॥ १०॥

दान में कल्पवृक्ष को भी मात करने वाले, धैर्य में समुद्रोपम गैलडा वंश भूषण जगतसेठ पदधारक जैनधर्म परायण, लोगों को सुख देने वाले वैभवशाली गुणवान हीरानंद सेठ हुए उनके सुपुत्र गुणीजनों से मान्य सेठ माणिकचंद हुए जिनके पुत्र जगतसेठ पद धारक सेठ फतेहचन्द हुए। उनके सुपुत्र आनंदचन्द और तत्पुत्र महताबराय हुए। उनके पुत्र खुशालचंद्र और उनके अंगज हर्षचंद्र और उनके आत्मज इन्द्रचंद्र धर्म कर्म परायण हुए। जिनके पुत्र गोविंदचंद के अंगज बुद्धप्रिय और जनता के प्रीति-पात्र जगतसेठ गुलाबचंद हुए। उनकी प्रिया फूलकुमारी कुल में सुखदायिनी हुई। उनके पुत्र फतेचंद्र और कनिष्ट अनुज कीर्तिशाली उदयचंद्र हुए। उन्होंने और उनकी गुणवान शीलवती (भार्या) ने कसौटी पाषाण निर्मित मंदिर को भागीरथी-गंगा द्वारा भग्न देखकर शुभकारक प्रतिमाओं की उत्तराफाल्युनी नक्षत्र के दिन अपने घर नव निकेतन में लाए। सं० 1975 वैशाख सुदी तिथि और संसार के दुखों से छुटकारा दिलाने वाले स्वनिर्मापित नूतन मन्दिर में सुरुचिकर आचार्य महाराज से पार्श्वनाथ जिनेश्वर की प्रतिष्ठा कराई।

स्वर्गीय भवरलालजी नाहटा

जब किसी भी राष्ट्र का विभाजन होता है या सीमाएँ परिवर्तित होती हैं तो अपना क्षेत्र पराया हो जाता है और पराया क्षेत्र अपना। सन् १९४७ ई. के विभाजन के बाद बंग क्षेत्र की सीमाओं में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए। पूर्व बंग पाकिस्तान में चला गया और पश्चिमी बंगाल हिन्दुस्तान में रहा। जिसमें बिहार के कुछ क्षेत्र भी समाहित

किए गए। अति प्राचीन तीर्थ स्थल सम्मेद शिखर जिसे बीस तीर्थंकरों की निर्वाण भूमि होने का सौभाग्य प्राप्त है बहुत ही पवित्र क्षेत्र माना गया है। इसके पार्श्ववर्ती अंचलों में बहने वाली नदियाँ दामोदर, कंसावती, शिलावती, बराकर और अजय नदी के तटवर्ती क्षेत्रों में जैन संस्कृति के प्राचीनतम निदर्शन इस क्षेत्र में जैनधर्म के प्रभाव के साक्ष्यरूप में आज भी वर्तमान है। आचारंग सूत्र से यह जाना जाता है कि आज से २६०० वर्ष पूर्व भगवान महावीर ने अंग बंग और राढ भूमि के विभिन्न जगहों पर विचरण किया था। उनके उपदेशों का प्रभाव आज भी इन क्षेत्रों में देखने को मिलता है। डॉ. प्रबोधचन्द बागची के अनुसार ईसा पूर्व तीसरी शताब्दी में जैनधर्म बंग देश में सुप्रतिष्ठित था जो सातवीं शताब्दी के मध्य तक अनवरत रूप से चलता रहा।

७वीं शताब्दी के बाद से क्रमश: श्रावकों को बंगदेश से पलायन करना पड़ा। राजस्थान और गुजरात की तरफ जो भूमि कभी श्रमण संस्कृति की महक से सुवासित थी शनै-शनै उसका ह्रास होने लगा। शताब्दियों बाद पुन: राजस्थान से श्रावकों का आगमन यहाँ पर हुआ। १७वीं शताब्दी के अंतिम चरण में जगतसेठ के बंगदेश में पदार्पण के बाद और भी अनेक श्रावक गण कासिमबाजार, अजीमगंज, जियागंज, बालूचर, महिमापुर में आकर बसे। जो भूमि कभी जिनेश्वरों के चरणरज से पवित्र हुई थी, जहाँ प्राचीन तीर्थस्थान डीही जिनेश्वर था जिसे आज अजीमगंज के नाम से जाना जाता है। वहीं पर इन श्रावकों ने मंदिरों और उपाश्रयों का निर्माण कर एक तीर्थ स्थान के रूप में स्थापित किया। इस तीर्थ स्थान में १८वीं शताब्दी से पुन: यति और मुनियों का आगमन होने लगा जिनका यहाँ के समाज पर विशेष धार्मिक प्रभाव पड़ा। १८वीं शताब्दी के अंत में यति नेहाल कवि ने प्रथम जगतसेठ फतेहचंद की माताश्री माणकदेवी के चरित्रमय रास की रचना की। श्री ज्ञानसार महाराजजी की काव्य रचना में बंग देश का बहुत ही सुंदर वर्णन किया गया है। अकबर प्रतिबोधक, हीरविजय शूरिजी के शिष्य उपाध्याय सोमविजयजी तथा उनके शिष्य परंपरा में

आगे चलकर ऋद्धि विजयजी के शिष्य चेतन विजयजी थे जिनका जन्म बंगदेश में हुआ था और अजीमगंज में वे अनेक वर्षों तक रहे तथा अजीमगंज में उन्होंने अनेक साहित्यिक रचनाएँ कीं। उनकी रचनाओं का संग्रह नाहर संग्रहालय में विद्यमान है। ये पहले ऐसे कवि थे जिनका जन्म बंगदेश में हुआ था।

कासिम बाजार के मंदिर में संवत् १७८० माघ वर्दी ३ को पं. मुनि भद्रगणि द्वारा निर्मित और उ. कपूर प्रियगणि के प्रतिष्ठा कराने के उल्लेख जैन लेख संग्रह में मिलते हैं। संवत् १७८१ में गुलाबचंद सेठिया ने यति हीरागिरिजी की पादुका का निर्माण कराया था। संवत् १८२१ माघ सुदी १५ को महोपाध्याय समयसुंदरजी की परंपरा में पं. हजारीनंदजी के उपदेश से मकसूदाबाद के कीरतबाग जियागंज में दादासाहब के चरणों का निर्माण करवाया तथा महेंद्रसतर सूरिजी से श्री शोभाचंद मोतीचंदजी ने उसकी प्रतिष्ठा करवाई। उपाध्याय क्षमाकल्याण महाराजजी ने जय तिहुअण भाषा-४१ गाथा की रचना की थी। मकसूदाबाद निवासी लालचंद के आग्रह पर महोपाध्याय समोसुंदरजी की शिष्य परंपरा में पं. आसकरनजी के शिष्य आलमचंदजी ने संवत् १८१५ बैशाख सुदी ५ को जीव विचार स्तवन गाथा ११५ की रचना की थी। उसके बाद मौन एकादशी चौपाई, **त्रैलोक** के प्रतिमा स्तवन तथा सम्यक्त्व कौमुदी चौपाई की रचना की थी। संवत् १८४७ में उ. क्षमाकल्याण महाराज ने मकसूदाबाद में सुक्तिरचनावली की स्वोपज्ञवृत्ति सहित रचना की थी। इस प्रकार हम देखते हैं कि देश में अराजकता के काल में भी मुर्शिदाबाद के अजीमगंज और जियागंज आदि क्षेत्रों में जैन साधुओं और यतियों का आवागमन होता रहा तथा धार्मिक साहित्य की रचना के साथ-साथ जैन समाज में धार्मिक चेतना का प्रभाव बना रहा। जगतसेठ के अवसान के बाद भी जैन समाज ने बंगदेश में कला साहित्य और संस्कृति के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

पुरुलिया की जैन धरोहर

अर्पित शाह

प्राचीन काल से बंगाल के पुरुलिया जिले को प्राकृतिक विरासत और संस्कृति में अत्यंत समृद्ध होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है । पुरुलिया में जैन धर्म का अस्तित्व काफी प्राचीन और गहरा रहा है। वर्त्तमान अवसर्पिणी काल के २४ वे तीर्थंकर श्रमण भगवान श्री महावीर स्वामी भगवान ने दीक्षा के पश्चात (लगभग ईस्वी की ६ सदी पूर्व) इस क्षेत्र में विचरण किया था, जिसका प्रमाण अनेक प्राचीन आगमों में प्राप्त है। प्राचीनतम जैन आगम श्री आचारांग सूत्र में उल्लेख हैं कि प्रभु श्री महावीर ने दीक्षा के बाद राढ़ प्रदेश में विचरण किया , जहाँ उनको काफी उपसर्गो का सामना करना पड़ा। इसके अलावा, श्री भगवती सूत्र में उल्लेख है कि प्रभु ने कई चातुर्मास पणिय भूमि में बिताए, जो कि राढ़ प्रदेश का एक हिस्सा है। एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका, भौगोलिक उल्लेख एवं बौद्ध, वैदिक और जैन स्त्रोतों के अनुसार राढ़ प्रदेश की सीमाएँ, पश्चिम में छोटा नागपुर पठार से ले कर पूर्व में गंगा डेल्टा तक फैली हुई थीं, यद्यपि इस क्षेत्र की सीमाओं को विभिन्न स्रोतों के अनुसार अलग-अलग रूप में परिभाषित किया गया है। परन्तु आज राढ़ प्रदेश का क्षेत्रफल मुख्य रूप से पश्चिम बंगाल के साथ-साथ भारत में झारखंड और बिहार के कुछ हिस्सों को भी शामिल करता है ।

आठवीं से बारहवीं शताब्दी के बीच पाल सम्राज्य में जैन धर्म अपने शिखर पे था। इस समय में कई जैन कारोबारी अपने जहाजों को पुरुलिया में बहने वाली दामोदर, कांग्साबाटी, द्वारकेश्वर, सुवर्णबालुका, शिलावती जैसी विभिन्न नदियों के माध्यम से अपने विक्रय के सामान को बंगाल की खाड़ी तक पहुँचाते थे । जैसे- जैसे उन जैन व्यापारियों का कारोबार बढ़ता गया वैसे ही वो ताजिर (ट्रेडर) से विकसित हो कर पुरुलिया से प्राप्त खनिज पदार्थ के निर्यातक (एक्सपोर्टर) बन गए. स्वयं के लिए अनुकूल वातावरण जानने पर ये व्यापारी अपने परिवार के साथ इस क्षेत्र में निवास करने लगे। यह जैन श्रावक जहाँ भी बसे वहाँ उन्होंने अपने आराध्य जिनेश्वर परमात्मा के मंदिरों का निर्माण कराकर तीर्थंकर प्रतिमाओं की प्रतिष्ठा करायी। जैन श्रावकों ने स्थानीय लोगों के लिए औषधालयों, भोजनशालाओं, धर्मशालाओं, तालाबों, जलकुण्डों व बाग-बगीचों आदि का निर्माण कराकर अनेक जन-कल्याण के कार्य किये । आज हमें न केवल नदियों के किनारे प्राचीन जैन मंदिरों के ध्वंसावशेष देखने को मिलते है बल्कि तालाबों अथवा जलकुण्डों के किनारे भी प्राचीन जैन मंदिरों (देउलों) के पुरावशेष देखने को मिल जाते है।

जैन श्रावकों द्वारा जो देउल (जैन मन्दिर) बनवाए गये थे आज उनके विध्वंस होने के दो कारण हो सकते हैं - पहला तो धर्मान्धता और दूसरा प्राकृतिक आपदा। गुप्तोत्तर काल में इस विस्तार का शासक शशांक एक कट्टर शैवोपासक था। उसने स्थानीय जैनो का उत्पीड़न और जैन मंदिरों की मूर्तियों का विध्वंस प्रारम्भ कर दिया। आज भी

दुलमी, तेलकूपी, देउल, पाकबिर्रा आदि स्थलों पर मन्दिरों व मूर्तियों के ध्वंसावशेष देखने को मिलते है। उसने जैन मंदिरों व मूर्तियों को नष्ट करके उनके स्थान पर उन्हीं के अवशेषों को शिवपिंडी के रूप में स्थापित किया और जनता को बलात् शिव की उपासना के लिए बाध्य किया। इतिहासकार यह भी अनुमान लगाते हैं की सम्भवतः किसी समय जैन व्यापारियों ने किसी कारणवश इस स्थान पर आना-जाना छोड़ दिया होगा जिस कारण ये मन्दिर वीरान हो गए और वैदिक समाज के लोगों ने इन मंदिरों पर अपना स्वामित्व स्थापित कर लिया । ततपश्चात् यहाँ प्रतिष्ठित तीर्थंकरों की मूर्तियों को हिन्दू मूर्तियों में परिवर्तित कर दिया गया।

प्रशासनिक द्रष्टि से वर्तमान के पुरुलिया जिले को २० थानों में विभक्त किया गया है - रघुनाथपुर, पुरुलिया, नेतुड़िया, सान्तुड़ी, काशीपुर, पाड़ा, पुन्चा, झालदा, आड़सा, जोयपुर, बाघमुण्डी, बलरामपुर, बड़ाबाजार, मानबाजार, बान्दोयान आदि। इन २० थानों के विभिन्न स्थलों पर हमें जैन धर्म के प्राचीन पुरावशेष दृष्टिगोचर होते हैं और इनमें से पुन्चा थाने में जैन पुरातत्व स्थलों की संख्या सर्वाधिक है। वर्तमान समय में पुरुलिया जिले के लगभग ४० गांव में जिन प्रतिमाजी और जैन धरोहर के अवशेष प्राप्त होते हैं जिनमे से मुख्य २५ स्थलों की जानकारी नीचे दी गई है-

1. सांकरा / सांकड़ा - कायोत्सर्ग मुद्रा में श्री पार्श्वनाथ और श्री शांतिनाथ की प्राचीन मूर्तियों की पूजा धर्मराज के रूप में की

जाती है। दो जिन प्रतिमाएँ और अनेक खंडित अवशेष इस मन्दिर में सिंदूर आदि से पूजे जाते हैं।

2. पारा - "रेखा देउल" शैली से निर्मित दो मंदिर कभी जैन तीर्थंकरो के लिए बने थे। समयकाल में उनको वैदिक मंदिरो के रूप में परिवर्तित किया गया था।

3. छर्रा- इस गांव में अद्भुत जैन धरोहर प्राप्त हुई है। गाँव के काली मंदिर के बाहर आदिनाथ भगवान की जटायुक्त कायोत्सर्ग मुद्रा की प्रतिमा को "द्वारपाल" बना दिया गया है। एक प्राचीन जैन मंदिर के अवशेष को "श्री भारतवर्षीय दिगंबर जैन तीर्थरक्षिणी महासभा" द्वारा संरक्षण मिल रहा है। इस गाँव में तीर्थरक्षणी महासभा ने एक छोटा सा अलग मंदिर भी बना दिया है पर उसके अंदर बिलकुल साफ़-सफाई नहीं होती और जिन प्रतिमाओं पर मकड़ी के जाले लग गए हैं । इस मंदिर के बाहर रास्ते के चबूतरे पर खंडित जिन प्रतिमाऐं रखी गई है और सामने के हिन्दू मंदिर में भी कुछ जिन प्रतिमाओं को भैरव के रूप में पूजा जाता है ।
4. अनाइजामबाद - पाल कालीन श्री आदिनाथ, श्री पार्श्वनाथ, श्री चंद्रप्रभ आदि तीर्थंकरों की कायोत्सर्ग और पद्मासन मुद्रा में भव्य प्रतिमाएँ यहाँ प्राप्त हुई है। पुरुलिया शहर के दिगंबर जैन समाज द्वारा इनका संरक्षण किया गया है।

5. सीतलपुर - चौबीसी युक्त श्री आदिनाथ की कायोत्सर्ग मुद्रा में भव्य प्रतिमा को यहाँ शिव मंदिर के पिछले बाहरी भाग में भैरवजी के रूप में पूजा जाता है। प्रतिमा का संरक्षण नहीं हुआ इसीलिए संपूर्ण पाषाण पर काई (मॉस) चढ़ चुकी है. आषाढ़ और वैशाख पूर्णिमा के दिनों पर इस प्रतिमाजी के समक्ष, स्थानीय प्रजा द्वारा पशु बलि का आयोजन किया जाता है ।

6. भांगड़ा - श्री महावीर स्वामी, श्री आदिनाथ और श्री चंद्रप्रभ स्वामी की चौमुखी प्रतिमाएँ यहाँ से प्राप्त हुई है। श्री आदिनाथ भगवान की कायोत्सर्ग मुद्रा में प्रतिमा को एक शिव मंदिर के पीछे खुले में रख दिया गया है और इस प्रतिमा की भैरव के रूप में पूजा की जाती है। दुर्भाग्य से, चूँकि मूर्ति को खुले में रखा गया है, स्थानीय बच्चों ने मूर्ति को क्रिकेट खेलने के लिए 'विकेट' के रूप में इस्तेमाल करके परिकर के कुछ हिस्सों को क्षतिग्रस्त कर दिया है। इसी गाँव में "श्री भारतवर्षीय दिगंबर जैन तीर्थरक्षिणी महासभा" ने एक मंदिर का निर्माण करवा के एक चतुर्मुखी चैत्य प्रतिमा को स्थापित किया है, पर मंदिर में लम्बे समय से साफ़-सफाई नहीं हुई है और कचरे और मकड़े के जाले लग चुके है। इसी मंदिर की बाहरी दीवाल पर जिन प्रतिमा के अवशेष को बुरी तरह से चिपका दिया गया है।

7. रक्षतपुर- इस गाँव में दो अद्भुत जिन प्रतिमाओं को भारतवर्षीय दिगंबर जैन तीर्थरक्षिणी महासभा द्वारा निर्मित काली मंदिर से जुड़े हुए एक कमरे में संरक्षण मिल रहा है । परन्तु इस कमरे

का उपयोग काली मंदिर के भंडार कक्ष (स्टोर रूम) की तरह किया जाता है और प्रतिमाजी को कोने में बिराजमान किया गया है. पद्मासनस्थ मुद्रा में पार्श्वनाथ प्रभु की प्रतिमा बहुत प्राचीन, सुन्दर, मनोरम और अद्भुत कलाकारी युक्त है। इस प्रतिमा में कटिसूत्र के अंकन प्राप्त होते हैं जिससे अनुमान लगाया जा सकता है की श्वेताम्बर श्रावकों द्वारा इस प्रतिमा का निर्माण करवाया गया था।

8. सांका - इस गाँव में एक भव्य चौबीसी युक्त आदिनाथ भगवान की कायोत्सर्ग मुद्रा में प्रतिमा को भारतवर्षीय दिगंबर जैन तीर्थरक्षिणी महासभा द्वारा निर्मित एक देहरी में संरक्षण मिल रहा है। एक जैन मूर्ति स्थानीय तालाब के पास खंडहर में पड़ी है जबकि श्री आदिनाथ भगवान की एक मूर्ति में कटिवस्त्र की नक्काशी है जिससे अनुमान लगाया जा सकता है की श्वेताम्बर श्रावकों द्वारा इस प्रतिमा का निर्माण करवाया गया था।

9. बर्रा - इस गाँव के एक वैदिक मंदिर के बाहर जैन सहस्त्रकूट को रक्खा गया है. वर्षों से उस पर सिंदूर चढ़ाने की वजह से सहस्त्रकूट सम्पूर्ण जीर्ण हो गया है। गाँव के चौराहे पर एक चतुर्मुखी चैत्य को एक बहुत ही छोटी देहरी के अंदर सुरक्षित करने का प्रयास किया है पर उसके चबूतरे पर प्रभु के समक्ष लोग ताश खेलते हैं।

10. तेलकुपी- यह गाँव एक जलमग्न स्थान है. दामोदर नदी के पार एक बाँध के निर्माण के परिणामस्वरूप पूरा शहर और अधिकांश जैन मंदिरों के साथ, 1959 में, डूब गया था. तेलकुपी ९वीं शताब्दी के पाल कालीन मंदिरों के साथ एक प्रमुख जैन बस्ती थी ।

11. गुरुड़ी- तेलकुपी से प्राप्त प्रतिमाओं को पास के गुरुड़ी गाँव में लाया गया था. दिगंबर जैन तीर्थरक्षिणी महासभा द्वारा निर्मित एक देहरी में प्रतिमाओं को संरक्षण मिल रहा है । श्री आदिनाथ भगवान की कायोत्सर्ग मुद्रा की खंडित प्रतिमा यहाँ विराजमान है। मस्तक से खंडित होने की वजह से गाँव वालो ने नया मुख बना कर से चिपका दिया है। मंदिर में भरत - बाहुबली की प्रतिमा भी विराजमान है ।

12. लखारा - श्री आदिनाथ और श्री चंद्रप्रभ स्वामी की पंचतीर्थी प्रतिमाएँ यहाँ एक खेत से प्राप्त हुई थीं ।

13. धाढकी - श्री आदिनाथ, श्री शांतिनाथ और श्री महावीर स्वामी की प्रतिमाओं को इस गाँव में काल भैरव के रूप में पूजा जाता है ।

14. लगारा - इस गाँव में जैन तीर्थंकरों की तीन प्रतिमाओं को स्थानीय काली मंदिर में रखा गया है। हालाँकि, पिछले वर्षों में इस क्षेत्र से भी कई प्राचीन मूर्तियों की चोरी हुई है ।

15. बारमासिया - श्री आदिनाथ, श्री अजितनाथ, श्री चंद्रप्रभ और विभिन्न चौबीसी युक्त प्रतिमाएँ इस गाँव से प्राप्त हुई हैं ।

16. पारुलडीहा - एक ग्रामीण के घर से प्राप्त श्री आदिनाथ की ५ फीट ऊँची प्रतिमा को भैरव के रूप में पूजा जाता है ।

17. भसाड़डांगा - गाँव के एक खेत से प्राप्त एक चौमुखी प्रतिमा यहाँ विराजमान है ।

18. तुसियामा - श्री आदिनाथ की प्राचीन प्रतिमा यहाँ से प्राप्त हुई थी।
19. मानबाजार - श्री आदिनाथ और श्री शांतिनाथ की प्राचीन प्रतिमाएँ यहाँ बिराजमान है ।

20. पोल्मा - श्री आदिनाथ और श्री संभवनाथ की मूर्तियों के साथ एक (अज्ञात) जैन तीर्थंकर की सात फीट की बिना मस्तक की प्रतिमा यहाँ एक खंडहर जैसे मंदिर में विराजमान है।

21. पगलारा - श्री पार्श्वनाथ की अत्यंत सुन्दर प्रतिमा को जिसे स्थानीय ग्रामीणों द्वारा काल भैरव के रूप में पूजा जाता है । जैनियों के अनुरोध के बावजूद प्रतिमा के सामने नियमित रूप से पशु बलि दी जाती है ।

22. गोलामारा - श्री महावीर स्वामी की बिना हाथों की प्राचीन सात फीट ऊँची खंडित प्रतिमा की स्थानीय लोग भैरव की तरह पूजा करते हैं ।

23. बांदा - प्राचीन जैन देउल (मंदिर) का खंडहर ।

24. देउलघाट - प्राचीन जैन देउल (मंदिर) के खंडहर ।

25. पाकबिरा- पुरुलिया शहर से लगभग पचास किलोमीटर दूर, पुरुलिया-पुँचा रोड पर स्थित यह गाँव जैन धरोहर का खजाना है। पाकबिरा तब सुर्खियों में आया जब पाल कालीन तीन जैन मंदिरों के अनेक जैन अवशेष यहाँ से प्राप्त हुए । भारतीय पुरातत्व के अग्रणी विद्वानों में से एक, श्री जे.डी. बेगलर ने १८७२ में इस जगह की खोज शुरू की, तब चौवीस में से केवल तीन मंदिर बचे थे। इन मंदिरों के निर्माण के लिए जिस सामग्री का इस्तेमाल किया गया था वह हरे रंग का क्लोराइट पत्थर था, जो इस क्षेत्र में प्रचुर मात्रा में पाया जाता है । सभी मंदिर ओडिसा के 'रेखा देउल' शैली में बनाए गए हैं। पहले मंदिर में प्रवेश द्वार को एक रथ की तरह बनाया गया है जिसमें एक घुमावदार प्रवेश द्वार है। दूसरा मंदिर भी उत्तर की ओर है जबकि तीसरा पूर्व की ओर उन्मुख है । पाकबिरा में महत्वपूर्ण रूप से श्री शीतलनाथ (अथवा श्री पद्मप्रभ) की आठ फीट ऊंची मूर्ति प्राप्त हुई थी जिसे आज भैरव के रूप में पूजा जाता है । इस प्रतिमा के साथ अधिष्ठायिका देवी की एक मूर्ति भी मिली

है, जिसे पास में ही रखा गया है । राज्य सरकार और स्थानीय आबादी ने इस स्थल का नाम "भैरव स्थान" रखा है और एक हिंदू मंदिर का निर्माण किया जा रहा है. पूर्व की ओर मुख किए हुए सबसे छोटे मंदिर में श्री चंद्रप्रभ स्वामी की एक चौबीसी युक्त के साथ एक सुंदर कायोत्सर्ग प्रतिमा है । अन्य दो मंदिरों में उत्तर की ओर मुख किए हुए हैं, जिनमें श्री आदिनाथ और श्री महावीर स्वामी की दो सुंदर प्रतिमाएँ हैं । तीसरे मंदिर में श्री आदिनाथ की एक और मूर्ति है जिसके परिकर में पंचतीर्थी है । सरकार के आर्थिक सहकर से एक संग्राहलय का भी निर्माण करवाया गया है जिसमे अनेक प्राचीन जिन प्रतिमाएँ और अवशेष प्रदर्शन के लिये रक्खे गये हैं । विभिन्न केश के लट युक्त श्री आदिनाथ भगवान की अनेक प्रतिमाएँ प्राप्त हुई हैं । उत्खनन से प्राप्त एक दिलचस्प अवशेष सहस्त्र-पट है जिसमें ३५६ तीर्थंकरों की प्रतिमा युक्त श्री आदिनाथ भगवान की प्रतिमा है. भगवान पार्श्वनाथ की धरणेन्द्र एवं पद्मावती युक्त दो खंडित प्रतिमाऐं भी संरक्षित हैं ।

PLATES

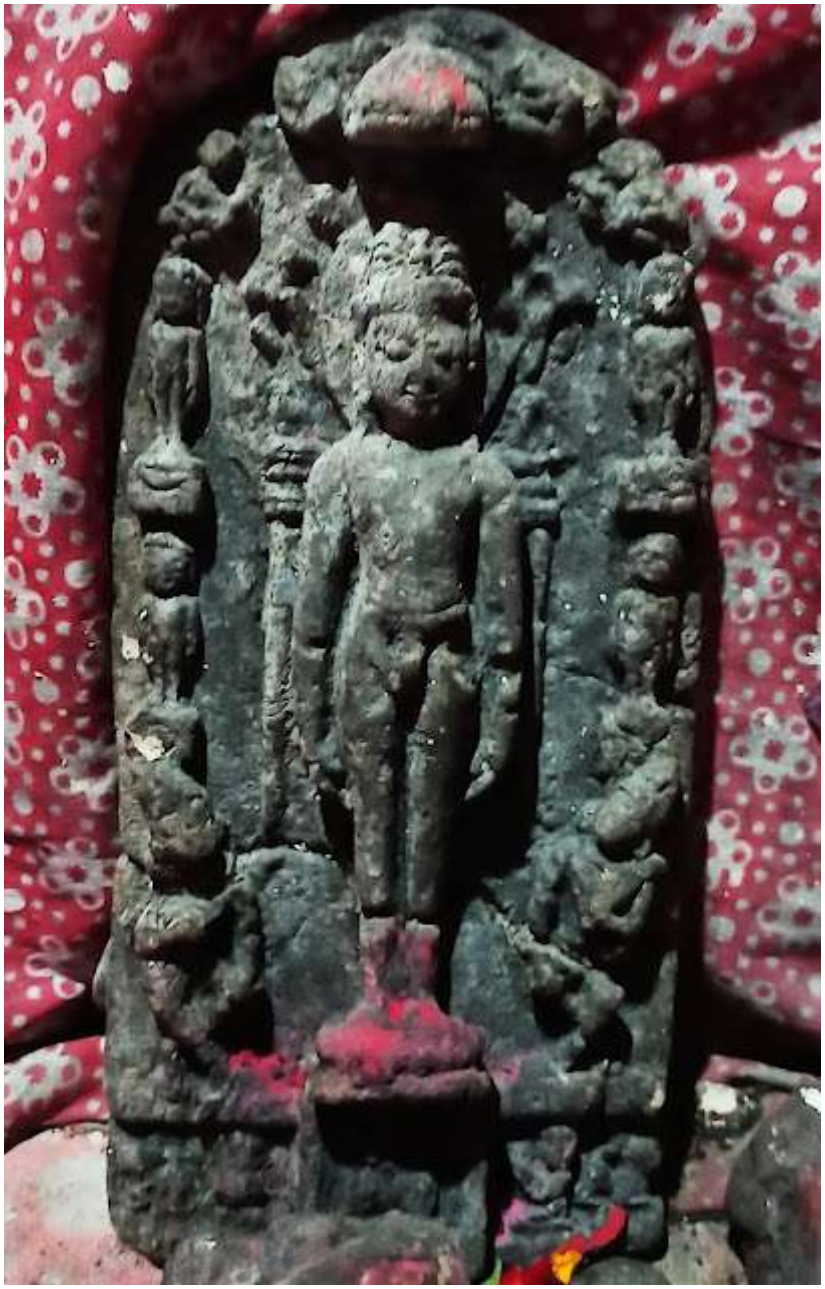

Jain idol at Sankra

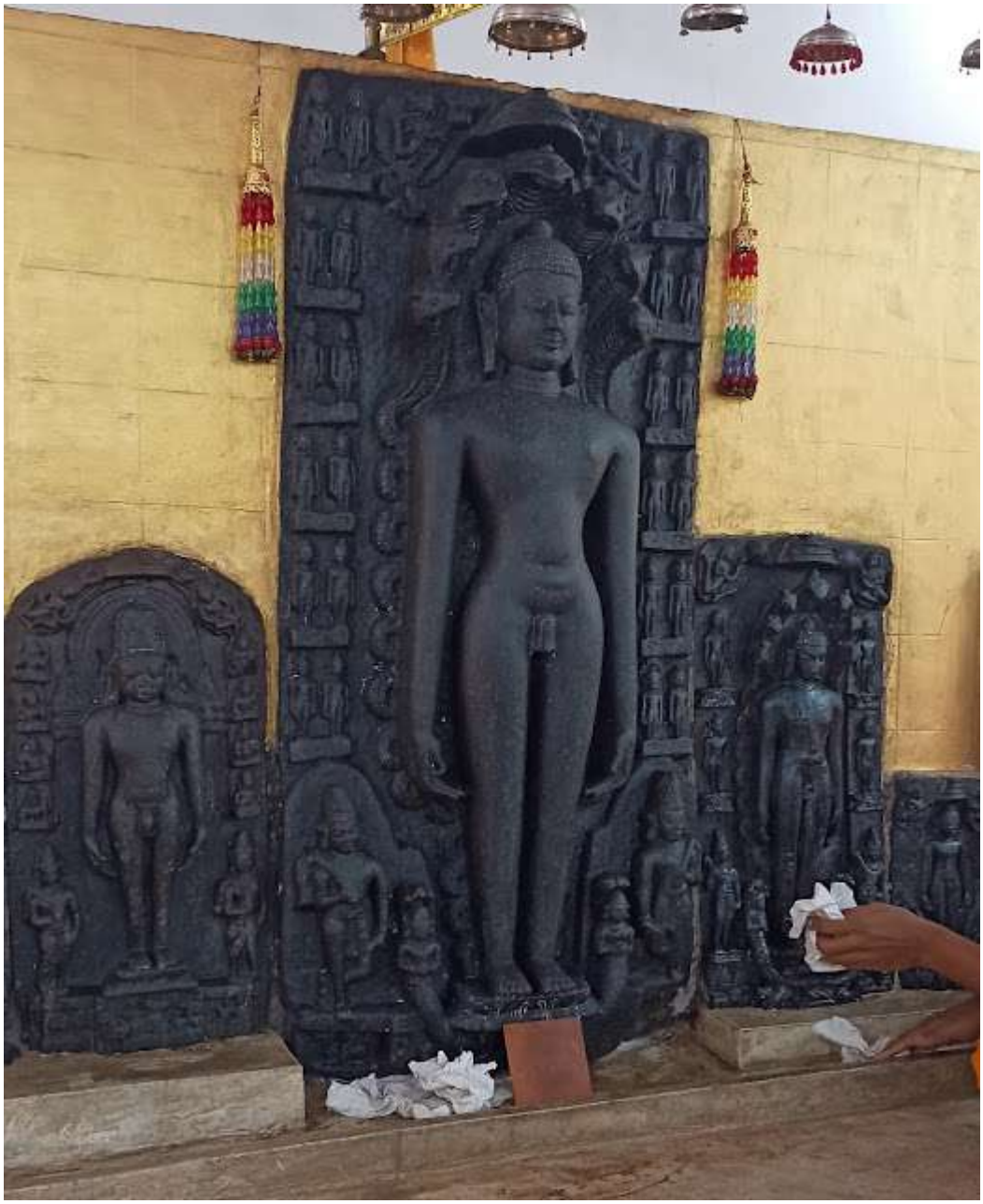

Recovered Jain idols at Digambar Jain Temple, Anaijambad

Shri Adinath Bhagwan, Sitalpur

Shri Adinath Bhagwan, Sanka

Damaged Jain idol lying in ruins near a pond in Sanka

Idol of Shri Adinath Bhagwan at Sanka

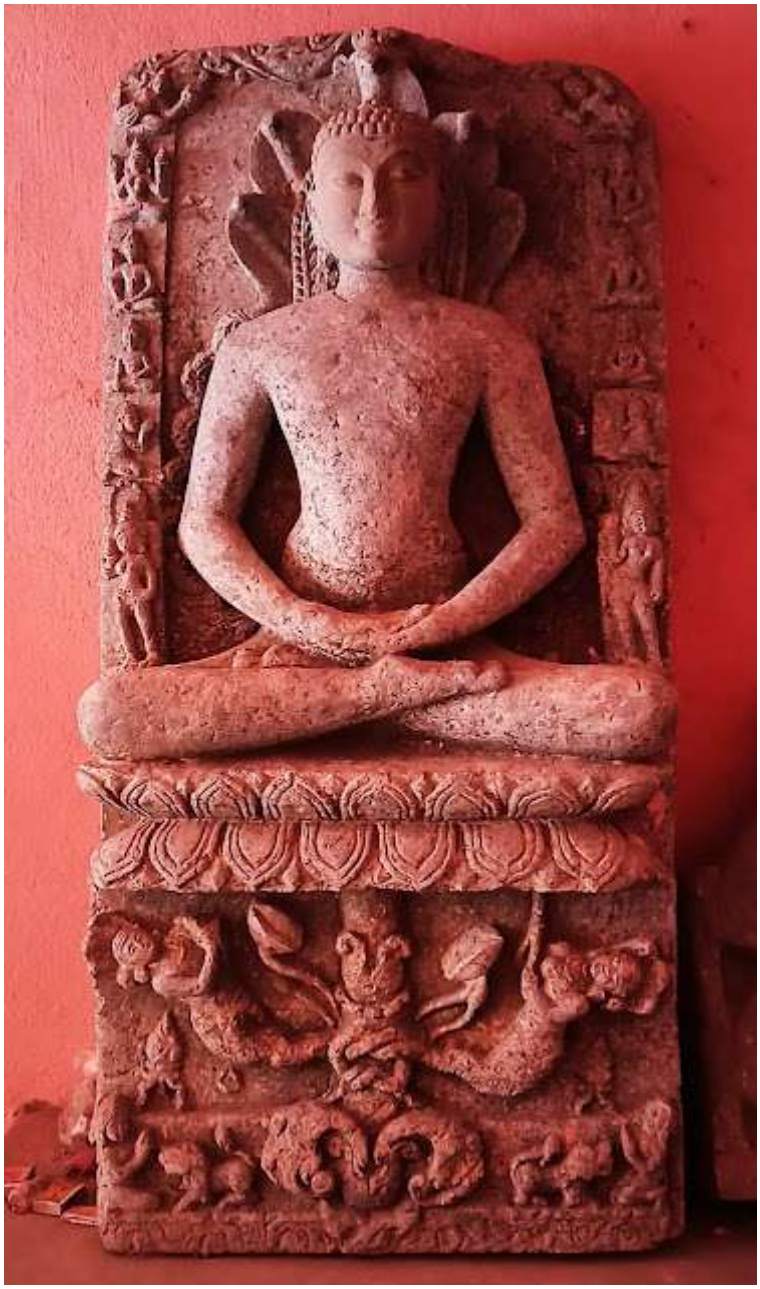

Idol of Shri Parshwanath Bhagwan at Rakshatpur

Locals playing cards in front of a Jain Chaturmukhi shrine in Barra.

Ruins of Jain temple at Telkupi (Source: Wikimedia Commons)

Shri Adinath Bhagwan, Gurudi

Jain idols at Lakhara (Source: Bharat Bahubali TV)

Dhadhki (Source: Bharat Bahubali TV)

Jain idols at Lagara (Source: Bharat Bahubali TV)

Jain idols at Barmasia (Source: Bharat Bahubali TV)

Shri Adinath Bhagwan worshipped as Bhairav at Paruldiha (Source: Bharat Bahubali TV)

Chaumukhji at Bhasardanga (Source: Bharat Bahubali TV)

Shri Adinath Bhagwan, Manbazar

Jain idols at Polma (Source: Bharat Bahubali TV)

Shri Parshwanath Bhagwan, Paglara (Source: Bharat Bahubali TV)

Jain idols at Charrah

Idol of Shri Adinath Bhagwan used as a "dwarpal" (gatekeeper) of a Kali Mata temple

Remains of an ancient Jain temple at Charrah

Jain ruins at Charrah

Damaged idol of Lord Mahavir at Golamara (Source: Bharat Bahubali TV)

Banda Deul (Source: Outlook India)

Para Deul

Deulghata Jain Temple (Source: Wikimedia Commons)

Pakbirra Jain Temples

Pakbirra Jain temple during excavation. Source: British Library

The third and the smallest surviving Jain temple at Pakbirra

8 ft idol of Lord Shitalnath/ Padmaprabh at Pakbirra worshipped as Bhairavnath by locals

Idol of Chandraprabh Swami at Pakbirra

Idol of Lord Adinath at Pakbirra

Idol of Mahavir Swami at Pakbirra

10 idols of Lord Adinath - all with different hair designs at Pakbirra

Idols of various Tirthankar's at Pakbirra

Sahastra Pat at Pakbirra

Damaged idols of Lord Parshwanath with Dharnendra & Padmavati at Pakbirra

Chaumukhi Shrines at Pakbirra

पुरुलिया की जैन धरोहर

अर्पित शाह

प्राचीन काल से बंगाल के पुरुलिया जिले को प्राकृतिक विरासत और संस्कृति में अत्यंत समृद्ध होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है । पुरुलिया में जैन धर्म का अस्तित्व काफी प्राचीन और गहरा रहा है। वर्त्तमान अवसर्पिणी काल के २४ वे तीर्थंकर श्रमण भगवान श्री महावीर स्वामी भगवान ने दीक्षा के पश्चात (लगभग ईस्वी की ६ सदी पूर्व) इस क्षेत्र में विचरण किया था, जिसका प्रमाण अनेक प्राचीन आगमों में प्राप्त है। प्राचीनतम जैन आगम श्री आचारांग सूत्र में उल्लेख हैं कि प्रभु श्री महावीर ने दीक्षा के बाद राढ़ प्रदेश में विचरण किया , जहाँ उनको काफी उपसर्गो का सामना करना पड़ा। इसके अलावा, श्री भगवती सूत्र में उल्लेख है कि प्रभु ने कई चातुर्मास पणिय भूमि में बिताए, जो कि राढ़ प्रदेश का एक हिस्सा है। एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका, भौगोलिक उल्लेख एवं बौद्ध, वैदिक और जैन स्त्रोतों के अनुसार राढ़ प्रदेश की सीमाएँ, पश्चिम में छोटा नागपुर पठार से ले कर पूर्व में गंगा डेल्टा तक फैली हुई थीं, यद्यपि इस क्षेत्र की सीमाओं को विभिन्न स्रोतों के अनुसार अलग-अलग रूप में परिभाषित किया गया है। परन्तु आज राढ़ प्रदेश का क्षेत्रफल मुख्य रूप से पश्चिम बंगाल के साथ-साथ भारत में झारखंड और बिहार के कुछ हिस्सों को भी शामिल करता है ।

आठवीं से बारहवीं शताब्दी के बीच पाल सम्राज्य में जैन धर्म अपने शिखर पे था। इस समय में कई जैन कारोबारी अपने जहाजों को पुरुलिया में बहने वाली दामोदर, कांग्साबाटी, द्वारकेश्वर, सुवर्णबालुका, शिलावती जैसी विभिन्न नदियों के माध्यम से अपने विक्रय के सामान को बंगाल की खाड़ी तक पहुँचाते थे । जैसे- जैसे उन जैन व्यापारियों का कारोबार बढ़ता गया वैसे ही वो ताजिर (ट्रेडर) से विकसित हो कर पुरुलिया से प्राप्त खनिज पदार्थ के निर्यातक (एक्सपोर्टर) बन गए. स्वयं के लिए अनुकूल वातावरण जानने पर ये व्यापारी अपने परिवार के साथ इस क्षेत्र में निवास करने लगे। यह जैन श्रावक जहाँ भी बसे वहाँ उन्होंने अपने आराध्य जिनेश्वर परमात्मा के मंदिरों का निर्माण कराकर तीर्थंकर प्रतिमाओं की प्रतिष्ठा करायी। जैन श्रावकों ने स्थानीय लोगों के लिए औषधालयों, भोजनशालाओं, धर्मशालाओं, तालाबों, जलकुण्डों व बाग-बगीचों आदि का निर्माण कराकर अनेक जन-कल्याण के कार्य किये । आज हमें न केवल नदियों के किनारे प्राचीन जैन मंदिरों के ध्वंसावशेष देखने को मिलते है बल्कि तालाबों अथवा जलकुण्डों के किनारे भी प्राचीन जैन मंदिरों (देउलों) के पुरावशेष देखने को मिल जाते है।

जैन श्रावकों द्वारा जो देउल (जैन मन्दिर) बनवाए गये थे आज उनके विध्वंस होने के दो कारण हो सकते हैं - पहला तो धर्मान्धता और दूसरा प्राकृतिक आपदा। गुप्तोत्तर काल में इस विस्तार का शासक शशांक एक कट्टर शैवोपासक था। उसने स्थानीय जैनो का उत्पीड़न और जैन मंदिरों की मूर्तियों का विध्वंस प्रारम्भ कर दिया। आज भी

दुलमी, तेलकूपी, देउल, पाकबिर्रा आदि स्थलों पर मन्दिरों व मूर्तियों के ध्वंसावशेष देखने को मिलते है। उसने जैन मंदिरों व मूर्तियों को नष्ट करके उनके स्थान पर उन्हीं के अवशेषों को शिवपिंडी के रूप में स्थापित किया और जनता को बलात् शिव की उपासना के लिए बाध्य किया। इतिहासकार यह भी अनुमान लगाते हैं की सम्भवतः किसी समय जैन व्यापारियों ने किसी कारणवश इस स्थान पर आना-जाना छोड़ दिया होगा जिस कारण ये मन्दिर वीरान हो गए और वैदिक समाज के लोगों ने इन मंदिरों पर अपना स्वामित्व स्थापित कर लिया । ततपश्चात् यहाँ प्रतिष्ठित तीर्थंकरों की मूर्तियों को हिन्दू मूर्तियों में परिवर्तित कर दिया गया।

प्रशासनिक द्रष्टि से वर्तमान के पुरुलिया जिले को २० थानों में विभक्त किया गया है - रघुनाथपुर, पुरुलिया, नेतुड़िया, सान्तुड़ी, काशीपुर, पाड़ा, पुन्चा, झालदा, आड़सा, जोयपुर, बाघमुण्डी, बलरामपुर, बड़ाबाजार, मानबाजार, बान्दोयान आदि। इन २० थानों के विभिन्न स्थलों पर हमें जैन धर्म के प्राचीन पुरावशेष दृष्टिगोचर होते हैं और इनमें से पुन्चा थाने में जैन पुरातत्व स्थलों की संख्या सर्वाधिक है। वर्तमान समय में पुरुलिया जिले के लगभग ४० गांव में जिन प्रतिमाजी और जैन धरोहर के अवशेष प्राप्त होते हैं जिनमे से मुख्य २५ स्थलों की जानकारी नीचे दी गई है-

1. सांकरा / सांकड़ा - कायोत्सर्ग मुद्रा में श्री पार्श्वनाथ और श्री शांतिनाथ की प्राचीन मूर्तियों की पूजा धर्मराज के रूप में की

जाती है। दो जिन प्रतिमाएँ और अनेक खंडित अवशेष इस मन्दिर में सिंदूर आदि से पूजे जाते हैं।

2. पारा - "रेखा देउल" शैली से निर्मित दो मंदिर कभी जैन तीर्थंकरो के लिए बने थे। समयकाल में उनको वैदिक मंदिरो के रूप में परिवर्तित किया गया था।

3. छर्रा- इस गांव में अद्भुत जैन धरोहर प्राप्त हुई है। गाँव के काली मंदिर के बाहर आदिनाथ भगवान की जटायुक्त कायोत्सर्ग मुद्रा की प्रतिमा को "द्वारपाल" बना दिया गया है। एक प्राचीन जैन मंदिर के अवशेष को "श्री भारतवर्षीय दिगंबर जैन तीर्थरक्षिणी महासभा" द्वारा संरक्षण मिल रहा है। इस गाँव में तीर्थरक्षणी महासभा ने एक छोटा सा अलग मंदिर भी बना दिया है पर उसके अंदर बिलकुल साफ़-सफाई नहीं होती और जिन प्रतिमाओं पर मकड़ी के जाले लग गए हैं । इस मंदिर के बाहर रास्ते के चबूतरे पर खंडित जिन प्रतिमाऐं रखी गई है और सामने के हिन्दू मंदिर में भी कुछ जिन प्रतिमाओं को भैरव के रूप में पूजा जाता है ।
4. अनाइजामबाद - पाल कालीन श्री आदिनाथ, श्री पार्श्वनाथ, श्री चंद्रप्रभ आदि तीर्थंकरों की कायोत्सर्ग और पद्मासन मुद्रा में भव्य प्रतिमाएँ यहाँ प्राप्त हुई है। पुरुलिया शहर के दिगंबर जैन समाज द्वारा इनका संरक्षण किया गया है।

5. सीतलपुर - चौबीसी युक्त श्री आदिनाथ की कायोत्सर्ग मुद्रा में भव्य प्रतिमा को यहाँ शिव मंदिर के पिछले बाहरी भाग में भैरवजी के रूप में पूजा जाता है। प्रतिमा का संरक्षण नहीं हुआ इसीलिए संपूर्ण पाषाण पर काई (मॉस) चढ़ चुकी है. आषाढ़ और वैशाख पूर्णिमा के दिनों पर इस प्रतिमाजी के समक्ष, स्थानीय प्रजा द्वारा पशु बलि का आयोजन किया जाता है ।

6. भांगड़ा - श्री महावीर स्वामी, श्री आदिनाथ और श्री चंद्रप्रभ स्वामी की चौमुखी प्रतिमाएँ यहाँ से प्राप्त हुई है। श्री आदिनाथ भगवान की कायोत्सर्ग मुद्रा में प्रतिमा को एक शिव मंदिर के पीछे खुले में रख दिया गया है और इस प्रतिमा की भैरव के रूप में पूजा की जाती है। दुर्भाग्य से, चूँकि मूर्ति को खुले में रखा गया है, स्थानीय बच्चों ने मूर्ति को क्रिकेट खेलने के लिए 'विकेट' के रूप में इस्तेमाल करके परिकर के कुछ हिस्सों को क्षतिग्रस्त कर दिया है। इसी गाँव में "श्री भारतवर्षीय दिगंबर जैन तीर्थरक्षिणी महासभा" ने एक मंदिर का निर्माण करवा के एक चतुर्मुखी चैत्य प्रतिमा को स्थापित किया है, पर मंदिर में लम्बे समय से साफ़-सफाई नहीं हुई है और कचरे और मकड़े के जाले लग चुके है। इसी मंदिर की बाहरी दीवाल पर जिन प्रतिमा के अवशेष को बुरी तरह से चिपका दिया गया है।

7. रक्षतपुर- इस गाँव में दो अद्भुत जिन प्रतिमाओं को भारतवर्षीय दिगंबर जैन तीर्थरक्षिणी महासभा द्वारा निर्मित काली मंदिर से जुड़े हुए एक कमरे में संरक्षण मिल रहा है । परन्तु इस कमरे

का उपयोग काली मंदिर के भंडार कक्ष (स्टोर रूम) की तरह किया जाता है और प्रतिमाजी को कोने में बिराजमान किया गया है. पद्मासनस्थ मुद्रा में पार्श्वनाथ प्रभु की प्रतिमा बहुत प्राचीन, सुन्दर, मनोरम और अद्भुत कलाकारी युक्त है। इस प्रतिमा में कटिसूत्र के अंकन प्राप्त होते हैं जिससे अनुमान लगाया जा सकता है की श्वेताम्बर श्रावकों द्वारा इस प्रतिमा का निर्माण करवाया गया था।

8. सांका - इस गाँव में एक भव्य चौबीसी युक्त आदिनाथ भगवान की कायोत्सर्ग मुद्रा में प्रतिमा को भारतवर्षीय दिगंबर जैन तीर्थरक्षिणी महासभा द्वारा निर्मित एक देहरी में संरक्षण मिल रहा है। एक जैन मूर्ति स्थानीय तालाब के पास खंडहर में पड़ी है जबकि श्री आदिनाथ भगवान की एक मूर्ति में कटिवस्त्र की नक्काशी है जिससे अनुमान लगाया जा सकता है की श्वेताम्बर श्रावकों द्वारा इस प्रतिमा का निर्माण करवाया गया था।

9. बर्रा - इस गाँव के एक वैदिक मंदिर के बाहर जैन सहस्त्रकूट को रक्खा गया है. वर्षों से उस पर सिंदूर चढ़ाने की वजह से सहस्त्रकूट सम्पूर्ण जीर्ण हो गया है। गाँव के चौराहे पर एक चतुर्मुखी चैत्य को एक बहुत ही छोटी देहरी के अंदर सुरक्षित करने का प्रयास किया है पर उसके चबूतरे पर प्रभु के समक्ष लोग ताश खेलते हैं।

10. तेलकुपी- यह गाँव एक जलमग्न स्थान है. दामोदर नदी के पार एक बाँध के निर्माण के परिणामस्वरूप पूरा शहर और अधिकांश जैन मंदिरों के साथ, 1959 में, डूब गया था. तेलकुपी ९वीं शताब्दी के पाल कालीन मंदिरों के साथ एक प्रमुख जैन बस्ती थी ।

11. गुरुड़ी- तेलकुपी से प्राप्त प्रतिमाओं को पास के गुरुड़ी गाँव में लाया गया था. दिगंबर जैन तीर्थरक्षिणी महासभा द्वारा निर्मित एक देहरी में प्रतिमाओं को संरक्षण मिल रहा है । श्री आदिनाथ भगवान की कायोत्सर्ग मुद्रा की खंडित प्रतिमा यहाँ विराजमान है। मस्तक से खंडित होने की वजह से गाँव वालो ने नया मुख बना कर से चिपका दिया है। मंदिर में भरत - बाहुबली की प्रतिमा भी विराजमान है ।

12. लखारा - श्री आदिनाथ और श्री चंद्रप्रभ स्वामी की पंचतीर्थी प्रतिमाएँ यहाँ एक खेत से प्राप्त हुई थीं ।

13. धाढकी - श्री आदिनाथ, श्री शांतिनाथ और श्री महावीर स्वामी की प्रतिमाओं को इस गाँव में काल भैरव के रूप में पूजा जाता है ।

14. लगारा - इस गाँव में जैन तीर्थंकरों की तीन प्रतिमाओं को स्थानीय काली मंदिर में रखा गया है। हालाँकि, पिछले वर्षों में इस क्षेत्र से भी कई प्राचीन मूर्तियों की चोरी हुई है ।

15. बारमासिया - श्री आदिनाथ, श्री अजितनाथ, श्री चंद्रप्रभ और विभिन्न चौबीसी युक्त प्रतिमाएँ इस गाँव से प्राप्त हुई हैं ।

16. पारुलडीहा - एक ग्रामीण के घर से प्राप्त श्री आदिनाथ की ५ फीट ऊँची प्रतिमा को भैरव के रूप में पूजा जाता है ।

17. भसाड़डांगा - गाँव के एक खेत से प्राप्त एक चौमुखी प्रतिमा यहाँ विराजमान है ।

18. तुसियामा - श्री आदिनाथ की प्राचीन प्रतिमा यहाँ से प्राप्त हुई थी।
19. मानबाजार - श्री आदिनाथ और श्री शांतिनाथ की प्राचीन प्रतिमाएँ यहाँ बिराजमान है ।

20. पोल्मा - श्री आदिनाथ और श्री संभवनाथ की मूर्तियों के साथ एक (अज्ञात) जैन तीर्थंकर की सात फीट की बिना मस्तक की प्रतिमा यहाँ एक खंडहर जैसे मंदिर में विराजमान है।

21. पगलारा - श्री पार्श्वनाथ की अत्यंत सुन्दर प्रतिमा को जिसे स्थानीय ग्रामीणों द्वारा काल भैरव के रूप में पूजा जाता है । जैनियों के अनुरोध के बावजूद प्रतिमा के सामने नियमित रूप से पशु बलि दी जाती है ।

22. गोलामारा - श्री महावीर स्वामी की बिना हाथों की प्राचीन सात फीट ऊँची खंडित प्रतिमा की स्थानीय लोग भैरव की तरह पूजा करते हैं ।

23. बांदा - प्राचीन जैन देउल (मंदिर) का खंडहर ।

24. देउलघाट - प्राचीन जैन देउल (मंदिर) के खंडहर ।

25. पाकबिरा- पुरुलिया शहर से लगभग पचास किलोमीटर दूर, पुरुलिया-पुँचा रोड पर स्थित यह गाँव जैन धरोहर का खजाना है। पाकबिरा तब सुर्खियों में आया जब पाल कालीन तीन जैन मंदिरों के अनेक जैन अवशेष यहाँ से प्राप्त हुए । भारतीय पुरातत्व के अग्रणी विद्वानों में से एक, श्री जे.डी. बेगलर ने १८७२ में इस जगह की खोज शुरू की, तब चौवीस में से केवल तीन मंदिर बचे थे। इन मंदिरों के निर्माण के लिए जिस सामग्री का इस्तेमाल किया गया था वह हरे रंग का क्लोराइट पत्थर था, जो इस क्षेत्र में प्रचुर मात्रा में पाया जाता है । सभी मंदिर ओडिसा के 'रेखा देउल' शैली में बनाए गए हैं। पहले मंदिर में प्रवेश द्वार को एक रथ की तरह बनाया गया है जिसमें एक घुमावदार प्रवेश द्वार है। दूसरा मंदिर भी उत्तर की ओर है जबकि तीसरा पूर्व की ओर उन्मुख है । पाकबिरा में महत्वपूर्ण रूप से श्री शीतलनाथ (अथवा श्री पद्मप्रभ) की आठ फीट ऊंची मूर्ति प्राप्त हुई थी जिसे आज भैरव के रूप में पूजा जाता है । इस प्रतिमा के साथ अधिष्ठायिका देवी की एक मूर्ति भी मिली

है, जिसे पास में ही रखा गया है । राज्य सरकार और स्थानीय आबादी ने इस स्थल का नाम "भैरव स्थान" रखा है और एक हिंदू मंदिर का निर्माण किया जा रहा है. पूर्व की ओर मुख किए हुए सबसे छोटे मंदिर में श्री चंद्रप्रभ स्वामी की एक चौबीसी युक्त के साथ एक सुंदर कायोत्सर्ग प्रतिमा है । अन्य दो मंदिरों में उत्तर की ओर मुख किए हुए हैं, जिनमें श्री आदिनाथ और श्री महावीर स्वामी की दो सुंदर प्रतिमाएँ हैं । तीसरे मंदिर में श्री आदिनाथ की एक और मूर्ति है जिसके परिकर में पंचतीर्थी है । सरकार के आर्थिक सहकर से एक संग्राहलय का भी निर्माण करवाया गया है जिसमे अनेक प्राचीन जिन प्रतिमाएँ और अवशेष प्रदर्शन के लिये रक्खे गये हैं । विभिन्न केश के लट युक्त श्री आदिनाथ भगवान की अनेक प्रतिमाएँ प्राप्त हुई हैं । उत्खनन से प्राप्त एक दिलचस्प अवशेष सहस्त्र-पट है जिसमें ३५६ तीर्थंकरों की प्रतिमा युक्त श्री आदिनाथ भगवान की प्रतिमा है. भगवान पार्श्वनाथ की धरणेन्द्र एवं पद्मावती युक्त दो खंडित प्रतिमाऐं भी संरक्षित हैं ।

PLATES

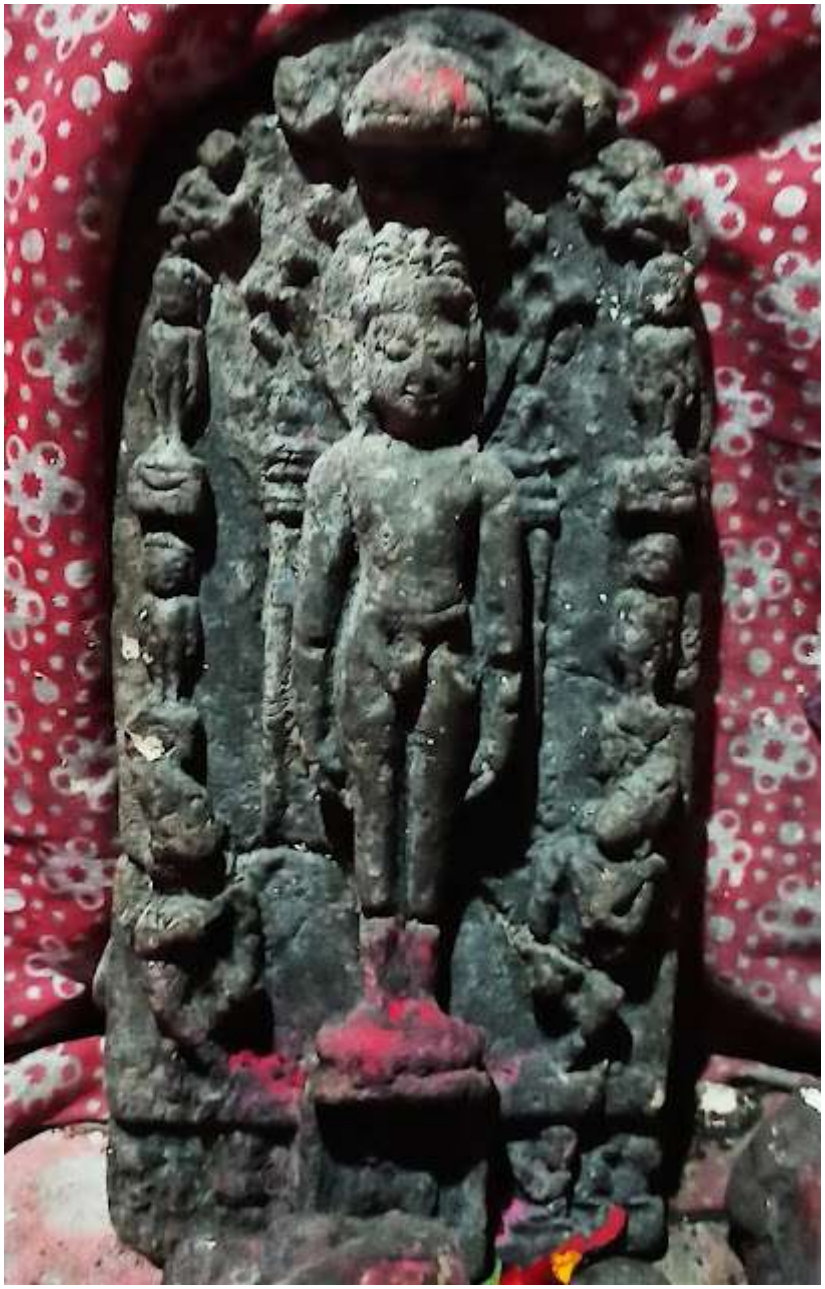

Jain idol at Sankra

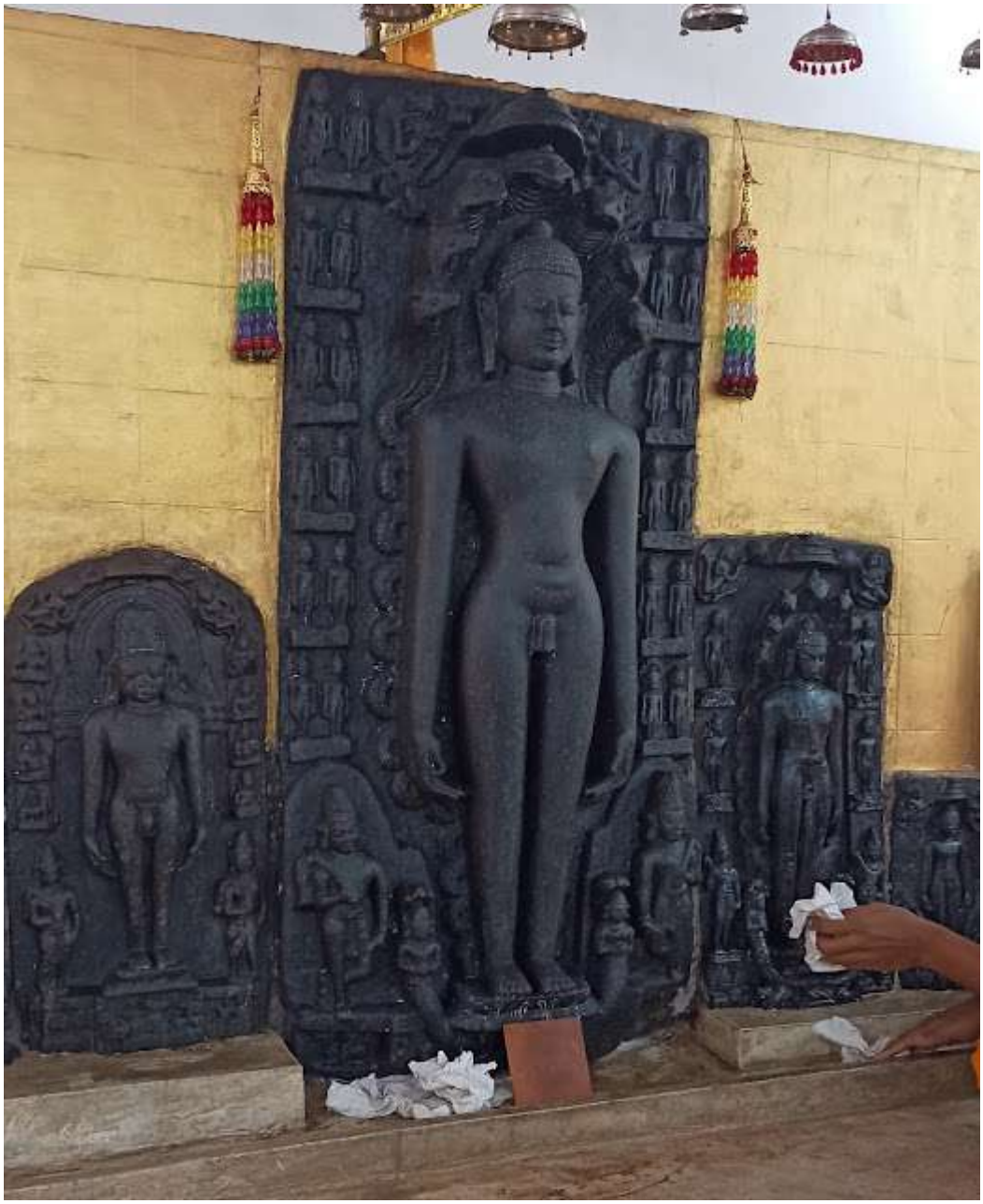

Recovered Jain idols at Digambar Jain Temple, Anaijambad

Shri Adinath Bhagwan, Sitalpur

Shri Adinath Bhagwan, Sanka

Damaged Jain idol lying in ruins near a pond in Sanka

Idol of Shri Adinath Bhagwan at Sanka

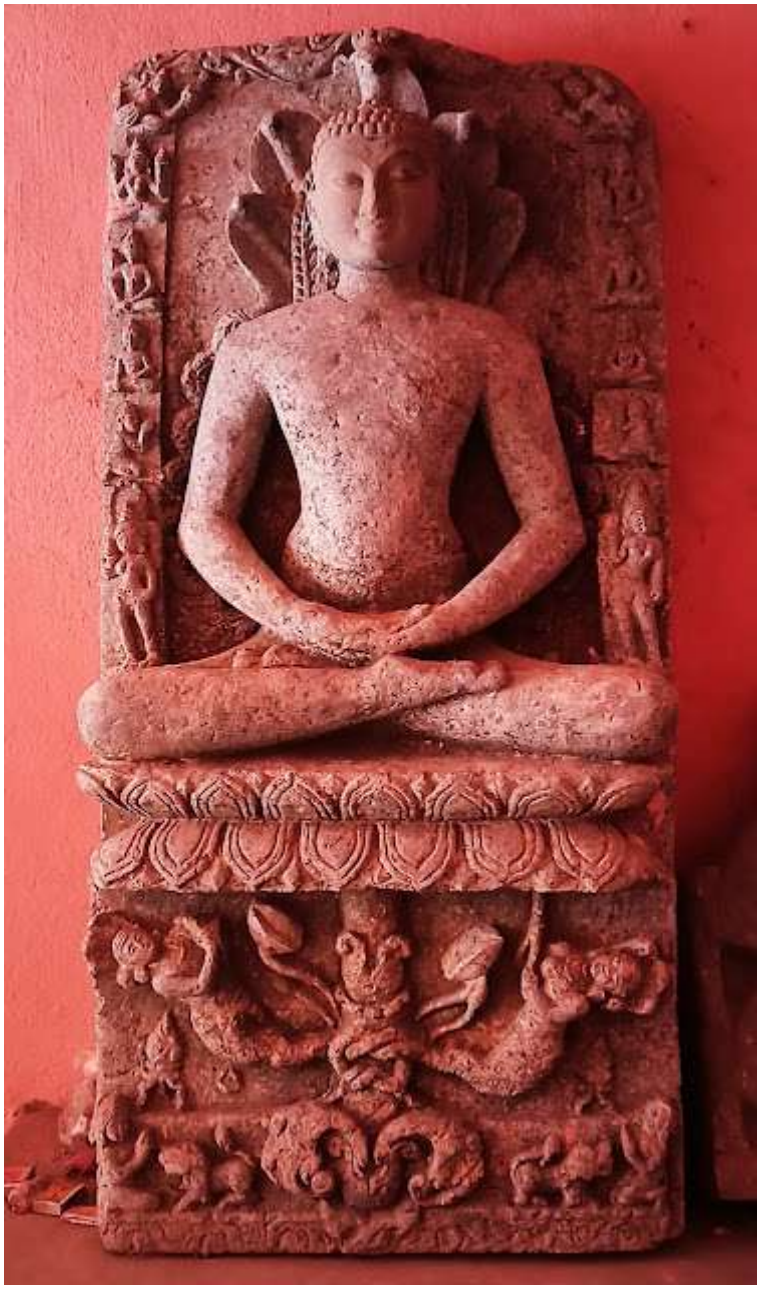

Idol of Shri Parshwanath Bhagwan at Rakshatpur

Locals playing cards in front of a Jain Chaturmukhi shrine in Barra.

Ruins of Jain temple at Telkupi (Source: Wikimedia Commons)

Shri Adinath Bhagwan, Gurudi

Jain idols at Lakhara (Source: Bharat Bahubali TV)

Dhadhki (Source: Bharat Bahubali TV)

Jain idols at Lagara (Source: Bharat Bahubali TV)

Jain idols at Barmasia (Source: Bharat Bahubali TV)

Shri Adinath Bhagwan worshipped as Bhairav at Paruldiha (Source: Bharat Bahubali TV)

Chaumukhji at Bhasardanga (Source: Bharat Bahubali TV)

Shri Adinath Bhagwan, Manbazar

Jain idols at Polma (Source: Bharat Bahubali TV)

Shri Parshwanath Bhagwan, Paglara (Source: Bharat Bahubali TV)

Jain idols at Charrah

Idol of Shri Adinath Bhagwan used as a "dwarpal" (gatekeeper) of a Kali Mata temple

Remains of an ancient Jain temple at Charrah

Jain ruins at Charrah

Damaged idol of Lord Mahavir at Golamara (Source: Bharat Bahubali TV)

Banda Deul (Source: Outlook India)

Para Deul

Deulghata Jain Temple (Source: Wikimedia Commons)

Pakbirra Jain Temples

Pakbirra Jain temple during excavation. Source: British Library

The third and the smallest surviving Jain temple at Pakbirra

8 ft idol of Lord Shitalnath/ Padmaprabh at Pakbirra worshipped as Bhairavnath by locals

Idol of Chandraprabh Swami at Pakbirra

Idol of Lord Adinath at Pakbirra

Idol of Mahavir Swami at Pakbirra

10 idols of Lord Adinath - all with different hair designs at Pakbirra

Idols of various Tirthankar's at Pakbirra

Sahastra Pat at Pakbirra

Damaged idols of Lord Parshwanath with Dharnendra & Padmavati at Pakbirra

Chaumukhi Shrines at Pakbirra

JAIN BHAWAN PUBLICATIONS

P-25, Kalakar Street, Kolkata - 700 007

English :

1. *Bhagavatī-Sūtra* - Text edited with English translation by K.C. Lalwani in 4 volumes ;
   - Vol - I (*śatakas 1 - 2*) Price : Rs. 150.00
   - Vol - II (*śatakas 3 - 6*) 150.00
   - Vol - III (*śatakas 7 - 8*) 150.00
   - Vol - IV (*śatakas 9 - 11*) ISBN : 978-81-922334-0-6 150.00
2. James Burges - *The Temples of Śatruñjaya,* 1977, pp. x+82 with 45 plates Price : Rs. 100.00
   [It is the glorification of the sacred mountain *Śatruñjaya.*]
3. P.C. Samsukha -- *Essence of Jainism* ISBN : 978-81-922334-4-4
   translated by Ganesh Lalwani, Price : Rs. 15.00
4. Ganesh Lalwani - *Thus Sayeth Our Lord,* Price : Rs. 50.00
   ISBN : 978-81-922334-7-5
5. *Verses from Cidananda*
   translated by Ganesh Lalwani Price : Rs. 15.00
6. Ganesh Lalwani - *Jainthology* ISBN : 978-81-922334-2-0 Price : Rs. 100.00
7. G. Lalwani and S. R. Banerjee- *Weber's Sacred Literature of the Jains*
   ISBN : 978-81-922334-3-7 Price : Rs. 100.00
8. Prof. S. R. Banerjee - *Jainism in Different States of India*
   ISBN : 978-81-922334-5-1 Price : Rs. 100.00
9. Prof. S. R. Banerjee - *Introducing Jainism* Price : Rs. 30.00
   ISBN : 978-81-922334-6-8
10. K.C.Lalwani - *Sraman Bhagwan Mahavira* Price : Rs. 25.00
11. Smt. Lata Bothra - *The Harmony Within* Price : Rs. 100.00
12. Smt. Lata Bothra - *From Vardhamana to Mahavira* Price : Rs. 100.00
13. Smt. Lata Bothra- *An Image of Antiquity* Price : Rs. 100.00

Hindi :

1. Ganesh Lalwani - *Atimukta* (2nd edn) ISBN : 978-81-922334-1-3
   translated by Shrimati Rajkumari Begani Price : Rs. 40.00
2. Ganesh Lalwani - *Śraman Samskriti ki Kavita,*
   translated by Shrimati Rajkumari Begani Price : Rs. 20.00
3. Ganesh Lalwani - *Nilāñjanā*
   translated by Shrimati Rajkumari Begani Price : Rs. 30.00
4. Ganesh Lalwani - *Candana-Mūrti,,*
   translated by Shrimati Rajkumari Begani Price : Rs. 50.00
5. Ganesh Lalwani - *Vardhamān Mahāvīr* Price : Rs. 60.00
6. Ganesh Lalwani - *Barsat kī Ek Rāt,* Price : Rs. 45.00
7. Ganesh Lalwani - *Pañcadasī* Price : Rs. 100.00
8. Rajkumari Begani - *Yado ke Aine me,* Price : Rs. 30.00
9. Prof. S. R. Banerjee - *Prakrit Vyākaraṇa Praveśikā* Price : Rs. 20.00
10. Smt. Lata Bothra - *Bhagavan Mahavira Aur Prajatantra* Price : Rs. 15.00
11. Smt. Lata Bothra - *Sanskriti Ka Adi Shrot, Jain Dharm* Price : Rs. 20.00
12. Smt. Lata Bothra - *Vardhamana Kaise Bane Mahāvir* Price : Rs. 15.00
13. Smt. Lata Bothra - *Kesar Kyari Me Mahakta Jain Darshan* Price : Rs. 10.00
14. Smt. Lata Bothra - *Bharat me Jain Dharma* Price : Rs. 100.00
15. Smt. Lata Bothra - *Aadinath Risabdav Aur Austapad* Price : Rs. 250.00
    ISBN : 978-81-922334-8-2
16. Smt. Lata Bothra - *Austapad Yatra* Price : Rs. 50.00
17. Smt. Lata Bothra - *Aatm Darsan* Price : Rs. 50.00
18. Smt. Lata Bothra - *Varanbhumi Bengal* Price : Rs. 50.00
    ISBN : 978-81-922334-9-9

Bengali:

1. Ganesh Lalwani - *Atimukta* Price : Rs. 40.00
2. Ganesh Lalwani - *Śraman Sanskritir Kavitā* Price : Rs. 20.00
3. Puran Chand Shymsukha - *Bhagavān Mahāvīra O Jaina Dharma.* Price : Rs. 15.00
4. Prof. Satya Ranjan Banerjee- *Praśnottare Jaina Dharma* Price : Rs. 20.00
5. Prof. Satya Ranjan Banerjee- *Mahāvīr Kathāmrita* Price : Rs. 20.00
6. Dr. Jagat Ram Bhattacharya- *Daśavaikālika sūtra* Price : Rs. 25.00
7. Sri Yudhisthir Majhi- *Sarāk Sanskriti O Puruliar Purākirti* Price : Rs. 20.00
8. Dr. Abhijit Battacharya - *Aatmjayee* Price : Rs 20.00
9. Dr Anupam Jash - *Acaryya Umasvati'r Tattvartha Sutra* (in press)
   ISBN : 978-93-83621-00-2

Journals on Jainism :

1. *Jain Journal* (ISSN : 0021 4043) A Peer Reviewed Research Quarterly
2. *Titthayara* (ISSN : 2277 7865) A Peer Reviewed Research Monthly
3. *Sraman* (ISSN : 0975 8550) A Peer Reviewed Research Monthly